ISSN 2394-8485

ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमति ज्ञान

ज्येष्ठ-आषाढ़, संवत् नानकशाही ५५१
वर्ष १२ अंक १० जून 2019

मुख्य संपादक : सिमरजीत सिंघ
संपादक : सतविंदर सिंघ फूलपुर
सहायक संपादक : जगजीत सिंघ

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर साहिब-१४३००६
फोन : 0183-2553956-60
एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग **303** संपादकीय विभाग **304**
फैक्स : 0183-2553919
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

गुरबाणी विचार ४
संपादकी ५
श्री गुरु अरजन देव जी ७
-डॉ. जगजीत कौर
शहीदी-प्रसंग श्री गुरु अरजन देव जी ११
-स. जसबीर सिंघ
श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब (कविता) १३
-डॉ. सुरिंदरपाल सिंघ
अतुल आत्म-बल के पुंज श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब १४
-डॉ. सत्येंद्र पाल सिंघ
भक्त कबीर जी की बाणी तथा विचारधारा १९
-डॉ. परमजीत कौर
युगपुरुष भक्त कबीर जी २६
-डॉ. मनजीत कौर
पीर बुद्धू शाह ३१
-डॉ. रूप सिंघ
प्रभु संग प्रीति (कविता) ३३
-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'
पुरजा पुरजा कटि मरै कबहू न छाडै खेतु ॥ ३४
-बीबी संदीप कौर
गुरु-घर की अप्रतिम श्रद्धालु : बीबी कौलां ३७
-डॉ. राजेंद्र सिंघ साहिल
महाराजा रणजीत सिंघ : एक अद्वितीय शख्सियत ३९
-श्री प्रयाग नारायण त्रिपाठी
श्री हरिमंदर साहिब और जून, १९८४ ई. ४२
-स. वरिआम सिंघ
सीहां उपलु जाणीऐ . . . ४६
-स. बलविंदर सिंघ जौड़ासिंघा
ख़बरनामा ४७

Final

गुरबाणी विचार

आसाड़ु तपंदा तिसु लगै हरि नाहु न जिंना पासि ॥
जगजीवन पुरखु तिआगि कै माणस संदी आस ॥
दुयै भाइ विगुचीऐ गलि पईसु जम की फास ॥
जेहा बीजै सो लुणै मथै जो लिखिआसु ॥
रैणि विहाणी पछुताणी उठि चली गई निरास ॥
जिन को साधू भेटीऐ सो दरगह होइ खलासु ॥
करि किरपा प्रभ आपणी तेरे दरसन होइ पिआस ॥
प्रभ तुधु बिनु दूजा को नही नानक की अरदासि ॥
आसाड़ु सुहंदा तिसु लगै जिसु मनि हरि चरण निवास ॥५॥ *(पन्ना १३४)*

पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी बारह माहा मांझ की इस पावन पउड़ी में आषाढ़ महीने की शिखर गर्मी की ऋतु के परिप्रेक्ष्य में मनुष्य-मात्र को सांसारिक इच्छाओं के अत्यधिक बुरे प्रभाव से बचकर जीवन रूपी रात्रि को न गंवाने तथा सतिगुरु की रूहानी अगुआई को प्राप्त करते हुए परमात्मा का साक्षात्कार प्राप्त करने का अंतिम उद्देश्य पूरा करने की निर्मल प्रेरणा बख़्शिश करते हैं।

सतिगुरु जी फरमान करते हैं कि आषाढ़ का महीना भले ही अत्यंत गर्मी वाला है लेकिन यह गर्मी वाला उन मनुष्यों को महसूस होता है जिनके पास परमात्मा का नाम नहीं है अथवा आषाढ़ महीने की कठोर उष्णता से परमात्मा के सदैव शीतल नाम की ओट में रहकर बचाव पूर्णत: संभव है। गुरु जी कथन करते हैं कि यह उसको गर्म लगता है जिसने सारे विश्व के सृजनहार को छोड़ दिया है और मनुष्य से ही आशा लगा रखी है। सदीवी सुख परमात्मा के नाम की ओट में है।

सतिगुरु जी कथन करते हैं कि प्रभु बिना किसी अन्य का सहारा चाहने अथवा लेने में व्यर्थ का भटकाव तथा खराबी है। यह गले में यम की फांसी पड़ने तुल्य है। ऐसा मनुष्य माथे पर लिखे अनुसार ही फल पाता है अर्थात् सदैव सहम अथवा भय में रहता है। जीवन रूपी रात यूं ही चली जाती है और अंतिम समय मनुष्य को निराशा होती है।

सतिगुरु जी फरमान करते हैं कि जीवन के आषाढ़ महीने में जिनको साधु अथवा सतिगुरु से साक्षात्कार हो गया वे प्रभु-दरबार में मुक्त हैं। हे प्रभु मालिक! अपनी कृपा करना! मेरे मन में भी आपके दीदार की प्यास जग जाए! यही प्रार्थना है। हे प्रभु! मुझे सतिगुरु से ज्ञात हो जाए कि आपके बिना कोई भी अन्य मेरे साथ नहीं है। जिस मनुष्य के मन में प्रभु-चरणों का निवास है उसको ग्रीष्म ऋतु से जुड़ा आषाढ़ महीना भी सुखदायी लगता है।

Final

संपादकीय

मैं बंदा बै खरीदु सचु साहिबु मेरा ॥

इतिहास में घटित बहुत-सारी घटनाएं समय गुज़र जाने के बाद वो चमक नहीं रख पाती जो सिक्ख इतिहास में गुरमति सिद्धांतों की तर्ज़मानी में से उत्पन्न हुई घटनाएं बरक़रार रखती हैं। अकाल पुरख के मिशन को साकार करने के लिए गुरु इस धरती को निवाजता है और इस दैवी मिशन की पूर्ति हेतु गुरु का आशीर्वाद महान गुरसिक्ख योद्धाओं को शहीदियां देने के लिए अथाह शक्ति, टेक तथा साहस बख़्शिश करता है। सिक्ख इतिहास की दास्तां में जून का महीना शूरवीर योद्धाओं द्वारा अन्याय, अत्याचार तथा ज़ब्र-जुल्म के विरुद्ध न्याय, मानवीय हकों, कौमी मांगों तथा सच-धर्म की स्थाप्ति के लिए जूझते हुए दी गई कुर्बानियों को अपने भीतर समेटे बैठा है, जिसको रहती दुनिया तक याद किया जाता रहेगा। अत्यंत गर्मी के इस महीने में शहीदों के सिरताज पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने गर्म तवी पर बैठ, गर्म रेत शीश पर डलवा, खौलते पानी की देग में बैठ शांतमयी शहीदी प्राप्त कर मानवता के सामने अत्याचारी ज़ालिम हकूमत का परदा फाश किया। श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत के बाद जुल्म, अन्याय के विरुद्ध भक्ति में से उपजी शक्ति के प्रयोग की जुल्म के विरुद्ध बेअंत जंगों, मोर्चों, साकों, घल्लूघारों की लंबी दास्तां शुरू होती है। जून महीने में असंख्य सिंघ-सिंघनियों, बच्चों, बुजुर्गों की शहादत सिक्ख इतिहास के रक्त-रंजित पृष्ठों में समोई हुई है।

जून, १७१६ तथा जून, १९८४ के शहीद नायकों की बात करें तो इनमें सिर्फ समय, स्थान तथा शख़्सियत बदली है, शहादत की मंशा, शहादत का जज़्बा तथा दोनों के पीछे कलगीधर पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के खंडे-बाटे के अमृत की शक्ति एक ही रही है।

ज़ालिम हकूमत द्वारा लताड़े जा रहे मज़लूमों को उनका हक दिलाने एवं न्यायकारी शासन स्थापित करने के लिए श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा बाबा बंदा सिंघ बहादुर का चयन उनकी दिव्य दृष्टि ही थी। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी कृपा-दृष्टि करते हुए बाबा जी को खंडे-बाटे की पाहुल छका उनमें जो रूहानी परिवर्तन लाए ऐसा परिवर्तन नाम-रूपी अमृत के हृदय में बस जाने पर ही आता है :

भए क्रिपाल दइआल गोबिंदा अंम्रित रिदै सिंचाई ॥
नव निधि रिधि सिधि हरि लागि रही जन पाई ॥ *(पन्ना ६७९)*

यह कलगीधर पिता के आशीर्वाद की रूहानी शक्ति ही थी कि बाबा बंदा सिंघ बहादुर ने खालसायी राज्य स्थापित कर 'हम राखत पातशाही दावा' के शब्दों को सच कर दिखाया तथा दुनिया के इतिहास में पहली बार भारत में ज़मींदारी प्रथा को खत्म कर किसानों को उनकी ज़मीनें सौंपी गईं। इस तरह बाबा बंदा सिंघ बहादुर का यह लोक-हितैषी तथा न्यायकारी प्रशासन में लोकतंत्र का आगाज़ था।

समय बीत जाने के साथ समय की हकूमतों द्वारा खालसा पंथ की कुर्बानियों को भुला दिया गया। खालसा पंथ की जायज़ मांगों को भी ठुकराया गया। कौमी हकों के लिए सिंघ शूरवीरों को पुन: संघर्ष कर शहादत प्राप्त करनी पड़ी।

बाबा बंदा सिंघ बहादुर की शहादत के बारे में बात करें तो साधारण बुद्धि पढ़-सुनकर आश्चर्यचकित

Final

हो जाती है कि वो कौन-सी शक्ति थी, कौन-सा ज़ब्बा था कि आंखों के सामने चार वर्ष के बच्चे के टुकड़े-टुकड़े कर उसका तड़पता हुआ दिल उनके मुंह में ठूंसा जाए और वे अडोल बैठे रहे? गर्म सलाखों से आंखें भींद दी जाएं परंतु अडोलता भंग न हो? नाम-रंग में रंगी इस रूह के सिदक को गुरबाणी की रौशनी में ही समझा जा सकता है। मन से पैदा हुई ममता पुत्र को कत्ल होता देखकर डोल सकती है किंतु बाबा बंदा सिंघ बहादुर ने तो शबद की कमाई द्वारा *'हउमै ममता शबदि जलाए'* वाली अवस्था प्राप्त कर ली थी। तभी तो वे अपनी आंखों के सामने पुत्र शहीद होता देख परमात्मा की रज़ा जानकर सहन कर गए। जल्लाद समझ रहा था कि बच्चे की बोटियां करके उसकी आंतों का हार बाबा बंदा सिंघ बहादुर के गले में डालने से शायद वे घबरा जाएंगे। उसको क्या मालूम था कि बाबा जी तो अपनी सुरति को शबद में लीन कर पहले ही निर्भयता का आभूषण गले में पहने हुए हैं :

सबदु सुरति लिव लीणु होइ अनभउ अघड़ घड़ाए गहणा। *(वार १८:२२)*

बाबा बंदा सिंघ बहादुर वो रूह थी जो प्रभु-मिलाप के लिए *"तनु मनु काटि काटि सभु अरपी"* की अर्ज़ करती है। जल्लाद द्वारा गर्म सलाखों से आंखें निकालना साधारण जन के लिए तो बड़ी दुखदाई बात है, मगर बाबा जी तो उस मुकाम पर पहुंचे हुए थे जहां प्रभु-मिलाप के लिए *"अखी काढि धरी चरणा तलि"* की अर्ज़ की जाती है। कुछ समय बाद ही तो सदैवकालीन प्रभु-मिलन की घड़ी आने वाली थी। अगर पिता की गोद में बैठाकर पुत्र को बोटी-बोटी किया जा रहा था तो कुछ समय बाद दोनों पिता-पुत्र ने गुरु-पिता की गोद में जाकर विराजमान होना था। ज़ालिमों को गुरु तथा सिक्ख की प्रीति की कद्र नहीं थी। वे अनजान लोग कह रहे थे कि इसलाम कबूल कर लो तो जान बख़्श दी जाएगी। परंतु *'शूरवीर वचन के बली'* बाबा बंदा सिंघ बहादुर के अंदर तो शबद चल रहा था :

मैं बंदा बै खरीदु सचु साहिबु मेरा ॥ जीउ पिंडु सभु तिस दा सभु किछु है तेरा ॥१॥
माण निमाणे तूं धणी तेरा भरवासा ॥ बिनु साचे अन टेक है सो जाणहु काचा ॥ *(पन्ना ३९६)*

ज़ालिम प्रभु-चरणों में लीन सुरत को तन की यातनाओं द्वारा डराने की असफल कोशिश कर रहा था। बाबा बंदा सिंघ बहादुर गुरबाणी में सुरत जोड़कर उच्चारण कर रहे थे :

मनु न डिगै तनु काहे कउ डराइ ॥ चरन कमल चितु रहिओ समाइ ॥ *(पन्ना ११६२)*

कर्म-वीरता तथा धर्म-वीरता में निपुण बाबा बंदा सिंघ बहादुर की आध्यात्मिक अवस्था तो *"तिथै जोध महाबल सूर ॥"* वाले मंडलों तक पहुंची हुई थी। परमात्मा का नाम उनके हृदय में समाया होने के कारण वे *"ना ओहि मरहि न ठागै जाहि ॥"* वाले मुकाम पर पहुंच कर मृत्यु के भय को खत्म कर चुके थे, इसलिए वे बेखौफ़ होकर अपने मिशन *"जो सूरा तिस ही होइ मरणा ॥"* को प्रभु-रज़ा में रहते हुए साकार कर गए।

बाबा बंदा सिंघ बहादुर गुरु जी के हुक्म से नांदेड़ की धरती से पंजाब की ओर आए। गुरु के हुक्म में रहकर जुल्म का खातिमा किया तथा प्रभु-हुक्म में ही सिदक, सब्र तथा शुक्राने में रहकर शहादत प्राप्त कर गुरसिक्खी कमा गए :

--हुकमी बंदा होइ कै खसमै दा भाणा तिसु भावै। . . .
गुरु सिखी गुरु सिखु कमावै ॥ *(वार २८:१६)*

सतविंदर सिंघ फूलपुर
फोनः +९१९९१४४१९४८४

Final

श्री गुरु अरजन देव जी

*-डॉ. जगजीत कौर**

प्रसिद्ध मुसलमान इतिहासकार मुहम्मद लतीफ के अनुसार श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत मानवता के इतिहास में इंकलाबी मोड़ की सूचक है। इस शहादत ने सिक्खों को जुल्म और अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष करने, सब्र-संतोष, सहनशीलता, शांति से अकाल पुरख का हुक्म मान कर दृढ़ संकल्पित हो अपने अधिकारों की रक्षा करने, उन्हें हर हाल में हासिल करने का हौसला और ढंग सिखा दिया। सिक्खी महल की नींव को इतना दृढ़ और मज़बूत कर दिया कि आगामी समय में विपत्तियों के भयानक अंधड़, तूफान भी इसे टस से मस न कर सके, इसका कुछ न बिगाड़ सके और यह नि:द्वंद्व आगे बढ़ती गई। शहादत देने के लिए सब्र और सिदक दो अनमोल गुण होने अनिवार्य हैं। भाई गुरदास जी का विचार है *"सबरु सिदकि सहीदु भरम भउ खोवणा।"* श्री गुरु अरजन देव जी में ये अमूल्य गुण जन्मजात थे, तभी तो भट्ट बाणीकार ने कहा है-- *"तै जनमत गुरमति ब्रहमु पछाणिओ ॥"*

श्री गुरु अरजन देव जी का प्रकाश १९ वैसाख, संवत् १६२० (१५ अप्रैल, १५६३ ई) को चौथे पातशाह श्री गुरु रामदास जी तथा माता भानी जी के घर गोइंदवाल साहिब में हुआ। उस समय तृतीय गुरु श्री गुरु अमरदास जी गुरगद्धी पर विराजमान थे। श्री गुरु रामदास जी उनकी सेवा में रत थे। गुरुदेव जी को गुरमुखी विद्या की महारत नाना जी (श्री गुरु अमरदास जी) से प्राप्त हुई। देवनागरी धर्मशाला से, संस्कृत-ज्ञान पंडित वेणी से, गणित (मामा) बाबा मोहरी जी और आध्यात्मिक साधना (मामा) मोहन जी से सीखी। बाबा बुड्ढा जी और भाई गुरदास जी से भारतीय दर्शन-शास्त्र के महत् गुण हासिल किए। श्री गुरु अमरदास जी ने श्री गुरु अरजन देव जी के बारे में भविष्यवाणी की थी-- 'दोहिता, बाणी का बोहिथा।'

श्री गुरु रामदास जी के तीन संतान थीं। बड़े प्रिथीचंद, उससे छोटे महादेव और सबसे छोटे श्री गुरु अरजन देव जी। महादेव वैरागी स्वभाव के थे। वे अधिकांश समय समाधिस्थ रहते। प्रिथीचंद को धन-दौलत तथा भेंट में आए पदार्थों को समेटने-संभालने में रुचि रहती। श्री गुरु अरजन देव जी शांत स्वभाव, सहज अवस्था में बाणी पढ़ने में व्यस्त रहते। पिता और नाना जी ने श्री गुरु अरजन देव जी में आगामी गुरुता के लिए योग्यता एवं सिक्खी की संभाल करने के गुण देखे थे। १८ साल की अवस्था में श्री गुरु रामदास जी ने इन्हें गुरुतागद्दी पर विराजमान किया।

बड़ा भाई प्रिथीचंद इनका शत्रु बन बैठा। अधिक से अधिक कष्ट पहुंचाने और तंग करने के उपाय सोचता रहता। गुरुदेव जी ने बड़े भ्राता का हमेशा आदर-सम्मान किया और उसकी ओछी चालों की ओर ध्यान न देते हुए अपनी सारी चेतना-शक्ति क्रियात्मक कार्यों में लगा दी। श्री गुरु रामदास जी ने पंचम

**१८०१-सी, मिशन कंपाऊंड, निकट सेंट मेरीज़ अकादमी, सहारनपुर-२४७००१, फोन : ९४१२४-८०२६६*

Final

पातशाह को श्री अमृतसर भेज दिया। श्री गुरु रामदास जी ने श्री अमृतसर नगर बसाया और अमृत सरोवर की खुदाई करवाई। गुरुदेव जी ने अमृत सरोवर को पक्का किया। तरनतारन, श्री हरिगोबिंदपुर, करतारपुर आदि नगर बसाए, उन्नत किए और सुन्दर सरोवरों का निर्माण करवाया।

सबसे खूबसूरत, विश्व का अनोखा, अनुपम, सरोवर के बीचो-बीच श्री हरिमंदर साहिब का निर्माण करवाया, जिसके संबंध में फरमान किया-- *"डिठे सभे थाव नही तुधु जेहिआ ॥"*

श्री हरिमंदर साहिब अमृत सरोवर के मध्य खड़ा आकाश की उन्मुक्त ऊंचाइयों को स्पर्श करता, देवलोक से स्वत: सहज उतरता नूर का स्रोत, अनोखा, अद्वितीय, दिव्य प्रकाश का पुंज विश्व की अकेली मिसाल है। सांसारिक मोह-माया और विकारों की अग्नि में तपते, जलते, भटकते प्राणियों को आत्मिक सुख-शांति, स्थिरता, शीतलता और सुकून प्रदान करता है। यह गुरुदेव जी द्वारा मानवता को दिया गया नायाब तोहफा है। इसके चार द्वार चारों दिशाओं से आने वाले प्राणियों को रंग-भेद, नस्ल, धर्म संप्रदाय से मुक्त होने का संदेश देते हैं-- *"खत्री ब्राहमण सूद वैस उपदेस चहु वरना कउ साझा ॥"* समग्र मानवता की साझी विरासत है।

इन सब रचनात्मक कार्यों से ऊपर उठकर सर्वोच्च परोपकार और मानव-कल्याण हित गुरुदेव जी ने जो कार्य किया वो था-- बाणी के विशाल संकलन श्री गुरु ग्रंथ साहिब की संपादना। श्री गुरु नानक देव जी से प्रारंभ कर द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ और खुद की उच्चारण की बाणी को एक ही जगह एकत्रित कर संपादित कर दिया। पहचान के लिए महला १, २, ३, ४, ५ संकेत दिए। विचारधारा के अनुसार मिलते १२वीं शती से लेकर १५वीं शती तक के प्रमुख १५ भक्तों, ११ भट्टों और गुरसिक्खों की बाणी को शामिल किया गया। सरल, सुखैन भाषा में उच्चरित बाणी का विशाल संकलन भाई गुरदास जी से लिखवाया। अपनी देखरेख में बाणी को सुंदर तरतीब में बांधा। बाद में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने श्री गुरु तेग बहादर साहिब की बाणी दमदमा साहिब स्थित हो भाई मनी सिंघ जी से लिखवा पुनर्संपादन किया।

इन सब महत् कार्यों से सिक्ख पंथ परिपक्व होता गया। इसका प्रचार-प्रसार भारत और भारतीय सीमाओं के पार विदेशों तक हुआ। काबुल, ईरान, अफगानिस्तान के प्रेमी, श्रद्धालु, सिक्ख गुरु-दर्शन को आने लगे। व्यापार को भी बढ़ावा मिला। समर्पित सिक्ख श्रद्धालुओं की भी संख्या बढ़ने लगी और गुरु जी के सौम्य, शांत व्यक्तित्व की लोकप्रियता भी। फारसी भाषा की प्राचीनतम पुस्तक 'दबिसतान-ए-मज़ाहिब' का लेखक गोबिंद अरदसतानी, जिसे मुहसिन फानी प्रसिद्ध नाम भी प्राप्त था, अपनी पुस्तक में सिक्ख गुरु साहिबान के बारे में लिखता हुआ श्री गुरु अरजन देव जी का जिक्र करते हुए कहता है कि श्री गुरु अरजन देव जी के समय सिक्ख धर्म शिखर तक पहुंच गया था। अनेक श्रद्धालुओं ने सिक्ख धर्म धारण किया। भारत क्या, भारत की सीमाओं के पार भी धर्म-प्रचार हुआ और सिक्ख धर्म चरम सीमा को स्पर्श करने लगा।

सिक्ख धर्म की बढ़ती लोकप्रियता समय की सत्ता को सहन नहीं थी। इस समय मुगल बादशाह जहांगीर तख़्तनशीन हुआ। इससे पहले अकबर बादशाह सुलहकुल नीति का था। वह गुरु जी के दर्शन करने भी आया था। लंगर पंगत में बैठ कर छका था। श्री गुरु ग्रंथ साहिब

Final

से बाणी के महावाक्य भी सुने थे। अकबर अति प्रसन्न हो लौट गया था। जहांगीर कट्टर फिरकापरस्त था। कुछ कारण तो यह भी थे कि वह शराब के नशे में धुत्त रहता था। अकबर अपने पोते खुसरो को बादशाह बनाना चाहता था, पर दरबार के कट्टर मुल्ला-मौलवियों ने और राजा मान सिंह कोका आदि ने अकबर की मौत की खबर को छुपा जहांगीर को गद्दीनशीन कर दिया। बाद में मौत की घोषणा की। खुसरो बगावत कर आगरा के किले से पंजाब की ओर भागा। काबुल-ईरान जाते रास्ते में वह तरनतारन गुरुदेव जी के पास रुका। पहले भी वह दादा अकबर के साथ आ चुका था। गुरु जी ने थके-मांदे खुसरो को लंगर छकाया और विश्राम भी करने दिया। फिर वह काबुल की ओर रवाना हुआ। जहांगीर की शाही फौज उसके पीछे लगी थी। वह रास्ते में ही पकड़ा गया और लाहौर दरबार में लाया गया। जहांगीर ने उसकी आंखें निकाल उसे अंधा कर कष्ट देकर मार डाला। जहांगीर ने उन लोगों की फिहरिस्त तैयार करने को कहा जिन्होंने खुसरो की मदद की थी।

प्रिथीचंद गुरु जी का बड़ा भाई गुरुता-गद्दी न मिलने के कारण गुरु जी से शुरू से ही ईर्ष्या करता था। इधर लाहौर दरबार का एक दीवान खत्री चंदू शाह था, जिसकी लड़की का रिश्ता श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के साथ गुरु साहिब ने सिक्ख संगत के कहने पर इसलिए ठुकरा दिया था, क्योंकि उसने लाहौर दरबार में गुरु-घर के प्रति कुबोल बोले थे। गुरु-घर को मोरी की ईंट और अपने खानदान को महल का चौबारा बताया था। इसे लाहौर की संगत ने गुरु-घर का अपमान समझा और गुरु जी से रिश्ता न करने की प्रार्थना की। अब चंदू शाह गुरु जी का कट्टर शत्रु बन बैठा। प्रिथीचंद उससे जा मिला। पीलू और छज्जू दो कवि थे, जिनकी रचना गुरमति अनुसार न होने के कारण श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल नहीं की गई थी। ये भी चंदू से जा मिले। दीवान होने के नाते चंदू का शाही दरबार में दबदबा था। इन सब ने मिलकर श्री गुरु अरजन देव जी के विरुद्ध जहांगीर के खूब कान भरे।

जहांगीर पहले से ही गुरु-घर के विरुद्ध था, कट्टर मुल्ला-मौलवियों के प्रभाव में था। वह विशेष कर मुजद्दिद आलिफसानी, जिसे शेख सरहिंदी भी कहा जाता था, के कट्टर प्रभावाधीन था। यह शेख सरहिंदी गैर-मुसलिमों से सख्त नफरत करता था और अपने समय में उन्हें सख्ती से दबाने एवं खत्म कर देने की नीति का झंडा बरदार था। बाद में इसी ने औरंगजेब को उसका मज़हबी अध्यापक बन तुअस्सब की पट्टी पढ़ाई थी। श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी के बाद इसी शेख ने अपने मित्र शेख अहमद बुखारी को पत्र लिखा था कि "इस समय गोइंदवाल वाले काफिर का मारा जाना एक अच्छी घटना है। . . . मैंने तो सपने में भी देखा था कि बादशाह ने कुफ्र का ताज चूर-चूर कर दिया है।" वह कुफ्र का ताज श्री गुरु अरजन देव जी को मानता था।

वैसे जहांगीर स्वभाव से ही गुरु-घर से नफरत करता था, जो उसकी अपनी लिखित तुजुके-जहांगीरी के ३५वें पृष्ठ पर अंकित है और इस प्रकार है-- "गोइंदवाल, जो ब्यास नदी के किनारे स्थित है, में पीरों-फकीरों के वेश में अरजन नाम का एक व्यक्ति है, जिसने बहुत-से भोले-भाले हिंदुओं को ही नहीं बल्कि नासमझ मूर्ख मुसलमानों को भी अपने तौर तरीकों का धारक बना लिया है। उसकी फकीरी और खुदा

Final

से निकटता की अच्छी प्रसिद्धि है। चारों ओर से मूर्ख लोग उसके पास खिंचे आते हैं। तीन-चार पीढ़ियों से उसकी कुफ्र की दुकान गर्म थी। मेरे मन में कई बार ख्याल आता था कि इस कुफ्र की दुकान को बंद करना चाहिए। उसे इसलाम के दायरे में लाया जाए। इसी बीच खुसरो यहीं से दरिया पार हुआ। उसकी रिहाइश पर पड़ाव किया। उसने इसके माथे पर तिलक लगाया। यह बात मेरे कानों में पड़ी। मैंने हुक्म दिया, इसका घर-घाट, धन और बच्चे मुर्तज़ा खान जब्त करले और उसे यासा के अधीन सख्त यातनाएं देकर मार दिया जाये।"

'यासा' जालिम तैमूरी दंड विधान का ऐसा नियम है जिसमें संत-महात्मा-फकीर का खून जमीन पर नहीं गिरता। उसे आग और गरम पानी के कष्ट देकर खत्म कर दिया जाता था। गुरु जी को इसलाम धर्म धारण करने और एक लाख रुपए जुर्माना देने को कहा गया। गुरु जी ने इनकार कर दिया। मुर्तजा खान से गुरु जी को अपने कब्जे में ले लिया। यह अमीर हिंदू चंदू शाह था, जो गुरु जी को अपनी लाहौर स्थित हवेली में ले गया और वहां उन्हें तीन दिन तक घोर कष्ट देता रहा। इस तथ्य की पुष्टि सन् १८७० में लिखे गए ग्रंथ 'महिमा प्रकाश' से होती है :--

तबी दुसटी (चंदू) इस मकर बणाइआ।
जहांगीर को लोभ दिड़ाइआ।
यो सपुरद हमरे कर दीजै।
दुइ लाख रुपिआ हमं से लीजै।
तब लिखाइ चंदू से लीना।
सपुरद मामला ता को कीना।

चंदू शाह ने अपनी हवेली में गुरु जी को अनेक असहनीय कष्ट दिए। पहले दिन एक बहुत बड़ा तवा गर्म किया गया। नीचे आग की लपटें जलती रहीं। गुरु जी को उस गर्म तवे पर बैठा दिया गया। दूसरे दिन रेत (बालू) गर्म की गई और उसके कड़छुल (कड़छे) भर-भर उनके शरीर पर डाली गई। तीसरे दिन बहुत बड़ी देग में पानी उबाला गया और खौलते पानी की देग में गुरु जी को बैठा दिया गया। उनका तमाम कोमल शरीर फफोलों से भर गया। वे बिलकुल शांत रहे। ध्यान प्रभु-चरणों में लगाए रखा। जब वे लगभग मृतप्राय हो गये तब उनके शरीर को रावी नदी के जल में डुबो दिया गया। इस प्रकार कई प्रकार के कष्ट सहारते हुए गुरु जी १ आषाढ़ संवत् १६६३ तद्नुसार ३० मई, सन् १६०६ ई को शहीद हो गए।

कुल ४३ वर्ष पंच भौतिक शरीर में रह गुरु जी ने मानव-कल्याण हेतु अनंत परोपकार किए। वे अत्यंत मिष्ठभाषी, कोमल स्वभाव, भगवद् भक्त, उच्च आध्यात्मिक गुणों से सम्पन्न, दार्शनिक, ब्रह्मज्ञानी, विद्वान, संपादनकर्ता और संस्थापक थे। शांति के पुंज, शहीदों के सिरताज, शिरोमणि शहीद श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत विश्व इतिहास में शांतिमय बलिदान की अप्रतिम उदाहरण है। कष्ट सहते हुए भी वे पूर्णत: शांत थे। चेहरे पर कोई शिकन नहीं थी। नेत्र बंद थे। चित्त प्रभु-चरणों में जुड़ा था। होंठ गुनगुना रहे थे :

-तेरा कीआ मीठा लागै ॥
हरि नामु पदारथु नानकु मांगै ॥ (पन्ना ३९४)
-मीतु करै सोई हम माना ॥
मीत के करतब कुसल समाना ॥ (पन्ना १८७)

Final

शहीदी-प्रसंग श्री गुरु अरजन देव जी

*-स. जसबीर सिंघ**

जो मनुष्य लगातार चुनौती देने पर भी अपने जीवन-आदर्शों पर दृढ़ता से डटा हुआ अपने प्राणों की आहुति दे दे अथवा कुर्बान हो जाए, किंतु अपनी धारणा में परिवर्तन न लाए, ऐसे बलिदानी पुरुष को 'शहीद' कहते हैं। देश व धर्म की खातिर रण-क्षेत्र में युद्धरत सैनिकों पर भी यही सिद्धांत लागू होता है।

मुगल शहंशाह अकबर अपने अंतिम दिनों में अपने पोते खुसरो को अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहता था। दूसरी तरफ उसका अपना पुत्र शहजादा सलीम (जहांगीर) था, जो कि बहुत बड़ा शराबी था। वो हर हाल में सिंहासन प्राप्त करना चाहता था। उसके विश्वास-पात्र शेख फरीद बुखारी ने उसको परामर्श देते हुए कहा कि केवल सैनिक-शक्ति से ही बात नहीं बनेगी, जनता में अपना रसूख भी उत्पन्न करना चाहिए। इस कार्य के लिए उसने जहांगीर की भेंट स्वयं शेख होने के नाते अपने पीर मुरशिद शेख अहमद सरहिंदी से करवाई। शेख अहमद सरहिंदी को शेख मजहद अलिफ सानी के नाम से भी जाना जाता है। शेख अहमद सरहिंदी पहले से ही राजनीतिक शक्ति प्राप्त किसी ऐसे व्यक्ति की तलाश में था, जिसके सहयोग से इसलाम के प्रचार एवं प्रसार को तीव्र गति दी जा सके। समय का पूरा-पूरा लाभ उठाते हुए शेख अहमद सरहिंदी तथा शेख फरीद बुखारी जैसे सांप्रदायिक मुसलमानों ने मन में ठान ली कि वे अपने फकीरी प्रभाव का प्रयोग कर प्रजा की सहानुभूति से जहांगीर को सिंहासन दिलवायेंगे। इसके बदले में इसलाम के प्रचार एवं प्रसार के लिए जहांगीर को प्रशासनिक बल प्रयोग करना होगा।

जहांगीर किसी भी कीमत पर राज-तख़्त को प्राप्त करना चाहता था। शेख अहमद सरहिंदी को शेख फरीद बुखारी के अतिरिक्त जहांगीर भी अपना पीर-मुरशिद मानने लगा। इस प्रकार इन दोनों ने जहांगीर को राज-तख़्त दिलवाने का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया। इन दोनों का विश्वास जहांगीर पर दृढ़ हो गया। शेख अहमद सरहिंदी ने अपनी पीरी के प्रभाव से अकबर को प्रभावित किया कि वह अपने बड़े शहजादे को अपना उत्तराधिकारी बनाने की घोषणा करे, क्योंकि सिंहासन पर उसका अधिकार बनता है, तत्पश्चात् समय आने पर खुसरो को स्वयं ही उसका अधिकार मिल जाएगा। इस पर अकबर भी दबाव में आ गया तथा उसने जहांगीर को राजतिलक लगा दिया।

अकबर की मृत्यु के पश्चात् जहांगीर ने शेख अहमद सरहिंदी को बहुत सम्मान देना शुरू कर दिया और तब से सभी सरकारी कार्यों में उसका परामर्श ही आदेश अथवा कानून होता। धीरे-धीरे जहांगीर कठपुतली-सा बनकर रह गया। सरकार के नीतिसंगत सभी फैसले शेख अहमद सरहिंदी के ही होते, जबकि बादशाह जहांगीर केवल ऐश्वर्य तथा विलासता के कारण

**१२३/१, सेक्टर-५५, चंडीगढ़-१६००५५, फोन : ९९८८१६०४८४*

Final

शराब में डूबा रहता। ऐसी दशा में शहजादा खुसरो ने तख़्त-प्राप्ति के लिए अपने ही पिता (जहांगीर) के विरुद्ध बगावत कर दी। इस बगावत को दमन करने का बीड़ा भी शेख फरीद बुखारी ने अपने सिर लिया। उसने सैनिक-बल से खुसरो को खदेड़ दिया। काबुल की ओर भागते हुए खुसरो को चिनाब नदी पार करते समय पकड़ लिया गया। जहांगीर के लाहौर पहुंचने पर उसको मृत्यु-दंड दे दिया गया।

शेख अहमद सरहिंदी ने खुसरो के इस वृत्तांत से अनुचित लाभ उठाने की योजना बनाई। उसने श्री गुरु अरजन देव जी को इसलाम के विकास में बाधक समझते हुए कुटिलता से समाप्त करने का विचार बनाया। पंचम पातशाह को खुसरो के बगावत-कांड से जोड़ कर दोषारोपण किया गया कि उन्होंने खुसरो की सेना की लंगर इत्यादि से सेवा कर सहायता की तथा श्री गुरु ग्रंथ साहिब में इसलाम की तौहीन के शबद लिखे हैं। दूसरी तरफ दीवान चंदू लाल ने भी जहांगीर के कान भरे तथा उसे गुरु जी के विरुद्ध सख्त कदम उठाने को विवश किया, क्योंकि गुरु जी ने चंदू लाल की बेटी का रिश्ता अपने सुपुत्र श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के साथ करने से मना कर दिया था।

गुरु जी को तलब किए जाने के आदेश जारी होने पर गुरुदेव कुछ विशिष्ट सिक्खों को साथ लेकर लाहौर पहुंच गए। वहां पर उन्हें बागी खुसरो को संरक्षण देने के आरोप में बागी घोषित कर दिया गया तथा दूसरे आरोप में कहा गया कि वे इसलाम के विरुद्ध प्रचार करते हैं।

इसके उत्तर में गुरुदेव ने बताया कि "खुसरो तथा उसके साथियों ने गुरुद्वारा (गोइंदवाल साहिब) में गुरु का लंगर छका था। वैसे लंगर छकने गुरु-घर कोई भी आ सकता है। श्री गुरु नानक देव जी का दर होने के कारण यहां राजा व रंक का भेद नहीं किया जाता। किसी पर कोई प्रतिबंध लगाने का प्रश्न ही नहीं उठता। सम्राट अकबर अपने समय इस दर पर आये थे और उन्होंने लंगर छक कर संतोष अनुभव किया था।"

विरोधियों ने बादशाह को विवश किया कि श्री गुरु अरजन देव जी बागी हैं। इन्होंने बादशाह की हुक्म-उदूली की है, इसलिए इनको मृत्यु-दंड दिया जाना ही उचित है।

बादशाह ने गुरु जी पर एक लाख रुपए जुर्माने का आदेश दिया और गुरु जी को लाहौर के गवर्नर मुर्तजा खान के हवाले कर वो स्वयं वहां से प्रस्थान कर गया। मुर्तजा खान ने श्री गुरु अरजन देव जी से जुर्माने की राशि की मांग की। गुरुदेव जी ने भुगतान करने से स्पष्ट इनकार कर दिया, क्योंकि जब कोई अपराध किया ही नहीं तो जुर्माना क्यों भरा जाए?

बस, फिर क्या था! सरकारी दुष्टों को निर्धारित षड्यंत्र के अनुसार कार्य करने का अवसर प्राप्त हो गया। कोतवाल गुरुदेव को अपनी हिरासत में लेकर लाहौर के शाही किले में ले आया। शेख अहमद सरहिंदी ने शाही काजी से गुरुदेव के नाम फतवा जारी करवा दिया। फतवे में कहा गया कि "गुरुदेव जुर्माने की राशि अदा नहीं कर सके, अत: वे इसलाम कबूल कर लें अन्यथा मृत्यु के लिए तैयार हो जाएं।" गुरुदेव ने उत्तर दिया कि "यह शरीर तो नश्वर है। इसका मोह कैसा? मृत्यु का भय कैसा? प्रकृति का नियम अटल है। जो पैदा हुआ है उसका मरण भी अवश्य होना है। मरना-जीना परमेश्वर के हाथ में है, इसलिए धर्म बदलने का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

Final

आपने जो मनमानी करनी है करो।" इस पर काज़ी ने इसलामी नियमावली अनुसार 'यासा' कानून के अंतर्गत मृत्यु-दंड का फतवा दे दिया। क्रोध में आकर उन्होंने गुरु जी को एक गर्म लोह (लोहे का बहुत बड़ा तवा) पर बिठा दिया। लोह पर बैठकर भी गुरुदेव अडोल रहे, जैसे कोई आदमी लोह पर नहीं बल्कि कालीन पर विराजमान हो।

गुरुदेव पर हो रहे इस तरह के अत्याचारों की सूचना जब लाहौर नगर की जनता तक पहुंची तो सांई मियां मीर जी तथा बहुत-सी संगत किले के पास पहुंची। उन्होंने पाया कि किले के चारों ओर सख़्त पहरा होने के कारण अंदर जाना असंभव है। अंदर जाने की अनुमति केवल सांई मियां मीर जी को ही मिल सकी। यातनाएं झेलते हुए गुरुदेव को देख कर साँई जी ने आश्चर्य प्रकट किया। तब गुरुदेव ने कहा कि "सब कुछ प्रभु की इच्छा अनुसार ही हो रहा है। किसी पर कोई गिला-शिकवा नहीं।" फकीरों की रमज़ (हृदय की बात) फकीर ने समझी।

गुरुदेव के मन पर जब कोई असर न हुआ तो जल्लादों ने एक बार फिर गुरुदेव को चुनौती दी और कहा कि "अभी भी समय है। सोच-विचार कर लो। अभी भी जान बख़्शी जा सकती है। इसलाम स्वीकार कर लो और जीवन सुरक्षित कर लो।" गुरुदेव ने उनके प्रस्ताव को पुन: अस्वीकार कर दिया। जल्लादों ने गुरुदेव के शीश पर गर्म रेत डालनी आरंभ कर दी। सिर में गर्म रेत पड़ने से गुरुदेव की नाक से खून बहने लगा और वे बेसुध हो गए। जल्लादों ने जब देखा कि उनका काम यासा कानून के विरुद्ध हो रहा है तो उन्होंने गुरुदेव के शीश पर ठंडा पानी डाल दिया, ताकि यासा कानून के अनुसार कष्ट देते समय अपराधी का खून न बहे। शीश पर पहले गर्म रेत और फिर ठंडा पानी डालने से भी जब कोई परिणाम न निकला तो जल्लादों ने परेशान होकर उनको खौलते पानी वाली देग में बिठा दिया। फफोलों से भरे शरीर से मवाद और खून निकलने लगा। ऐसे में गुरुदेव को और भी कष्ट देने हेतु उन्हें रावी नदी के ठंडे पानी में बिठाया गया। वहीं वे शहादत प्राप्त कर गए :

जिउ जल महि जलु आइ खटाना ॥
तिउ जोती संगि जोति समाना ॥ (पन्ना २७२)

दीवान चंदू लाल तथा शेख अहमद सरहिंदी के षड्यंत्र के शिकार जहांगीर के शासन-काल में श्री गुरु अरजन देव जी को शहीद कर दिया गया।

कविता

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब

*-डॉ. सुरिंदरपाल सिंघ**

पीरन पीर गुरु हरिगोबिंद जी!
मीरन मीर गुरु हरिगोबिंद जी।
बाअदब मन:अंतर मेरी वंदना!
बाअदब शरणम् मेरी याचना!
बंदी-छोड़ दाता गुरु हरिगोबिंद जी!
जीवन-जोड़ दाता गुरु हरिगोबिंद जी!
न्याय-व्यवस्था के व्यवस्थापक!
श्री अकाल तख़्त साहिब के संस्थापक!
छठम पीर गुरु हरिगोबिंद जी!
गुर भारी गुरु हरिगोबिंद जी!

**पत्तण वाली सड़क, पुराना शाला, गुरदासपुर-१४३५२१, फोन : ९४१७१-७५८४६*

Final

अतुल आत्म-बल के पुंज श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब

*-डॉ. सत्येंद्र पाल सिंघ**

ब्रह्मज्ञानी बाबा बुड्ढा जी ने वचन कहे थे कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब अतुल बलशाली और दुष्टभंजक होंगे। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने बाबा बुड्ढा जी के कहे वचनों को शब्दश: सत्य करते हुए बल और पराक्रम का ऐसा उदाहरण स्थापित किया जो धर्म तथा मानवता को गौरवान्वित करने वाला व अद्भुत था। उनका बल उनकी आत्मिक श्रेष्ठता में था, उनके गुणों एवं आचार में था और उनकी तेग में था। गुरु साहिब के समकालीन सिक्ख विद्वान भाई गुरदास जी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की महिमा का वर्णन करते हुए कहा कि "गुरु साहिब दुख-सुख, हर्ष-शोक से ऊपर उठे हुए, निर्लिप्तता की मूर्ति थे, जो पूरे संसार का पालन-पोषण और संरक्षण करने में पूरी तरह समर्थ थे। वे सांसारिक रंग, रस से उदासीन थे। संसार भर का ज्ञान और गुण उनके समक्ष तुच्छ था।"

सदा सहज और आनंद की सर्वोत्तम अवस्था में रहने वाले श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का व्यक्तित्व निरंतर एक के बाद एक विस्मय पैदा करने वाला था। अपने पिता श्री गुरु अरजन साहिब की लाहौर में शहीदी के बाद ग्यारह वर्ष की आयु में गुरुआई पर आसीन होने वाले श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के सामने परिस्थितियां अत्यंत चुनौतीपूर्ण थीं। श्री गुरु नानक साहिब द्वारा चलाए गए पंथ में पहली बार कोई बलिदान हुआ था वह भी स्वयं श्री गुरु अरजन साहिब का। तत्कालीन शासन से उनका सीधा टकराव पैदा हो गया था। इसके साथ ही सिक्ख पंथ को अंदर से कमज़ोर करने वाली ताकतें भी सक्रिय हो गई थीं। सिक्ख इतिहास का यह सबसे नाजुक मोड़ था, जब लिया गया कोई भी निर्णय भविष्य को लंबे समय तक प्रभावित करने वाला था। इस समय सिक्ख पंथ को ऐसे समर्थ और सूझवान नेतृत्व की आवश्यकता थी जो समस्त विपरीत परिस्थितियों को उलट कर सदा के लिए मार्ग प्रशस्त कर सके। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने गुरुआई पर आसीन होते ही अपने संकल्प और लक्ष्य की ओर संकेत कर दिया था। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने दसतार पर कलगी सजाई जो राजशाही का प्रतीक मानी जाती थी। गुरु साहिब ने दो कृपाणें धारण कीं। एक कृपाण 'मीरी' अथवा राज-शक्ति और दूसरी 'पीरी' अथवा धर्म-शक्ति का प्रतीक थी। उनका मंतव्य स्पष्ट था कि वे धर्म की गौरवशाली स्थापना चाहते थे और धर्म के मार्ग में आने वाली किसी भी बाधा को दूर करने के लिए बल-प्रयोग से भी पीछे हटने वाले नहीं थे। किसी सिक्ख गुरु का शस्त्र धारण करना और किसी महाराजा की तरह व्यवहार करना बाकी लोगों के मन को भयभीत कर गया जो उनकी महानता को देख सहन नहीं कर पा रहे थे। कुछ डरपोक लोगों ने गुरु साहिब की मां माता गंगा जी को पूरी बात बताते हुए आशंका प्रकट की कि इससे

**ई-१७१६, राजाजी पुरम, लखनऊ-२२६०१७, फोन : ९४१५९-६०५३३*

Final

मुगल शासन नाराज हो सकता है। माता जी को बाबा बुड्ढा जी के वचनों के बारे में पता था। माता जी ने जब गुरु जी से इस विषय में बात की तो गुरु साहिब ने उन्हें आश्वस्त किया कि वे निश्चिंत रहें। कोई भी वैरी उनका बाल बांका नहीं कर पाएगा और सिक्ख पंथ श्री गुरु नानक साहिब के सिद्धांतों पर आगे बढ़ता रहेगा।

उस समय परंपरा बन गई थी कि जब भी सिक्ख संगत गुरु-घर दर्शन के लिए आती, यथायोग्य भेंट आदि भी लाती, जिनमें बहुमूल्य वस्तुएं भी हुआ करती थीं। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने कहा कि अब यदि कोई शस्त्र, घोड़े आदि भेंट में लेकर आयेगा तो उन्हें अधिक प्रसन्नता होगी। गुरु साहिब ने बलिष्ठ और सुयोग्य नौजवानों की सेना का गठन किया, जिन्हें अस्त्र-शस्त्र चलाने और युद्ध-कला में पूरी तरह पारंगत किया गया। इसके साथ ही उन्हें सिक्ख धर्म के सिद्धांतों और गुरबाणी से भी जोड़ा गया। धर्म हेतु श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के उठाये कदमों का आम लोगों पर गहरा प्रभाव पड़ा। कहते हैं कि पांच सौ चुने हुए नवयुवक स्वेच्छा से गुरु साहिब के पास आए और निवेदन किया कि उनके पास अर्पण करने को अपने जीवन के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। गुरु साहिब ने उन्हें भी अपनी फौज में शामिल कर लिया। किसी राजा अथवा राजा की सेना और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की सेना में यह मूलभूत अंतर था। गुरु साहिब के सैनिक धर्म हेतु जान भी दांव पर लगाकर धन्य होने वाले लोग थे। गुरु साहिब की सेवा में आकर वे स्वयं को उपकृत महसूस करते थे। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के दरबार में गुरबाणी का अमृत बरस रहा था और उस अमृत को ग्रहण करने का बल भी प्रकट हो रहा था। धर्म की ऐसी शोभा कभी नहीं बनी थी। गुरु साहिब में परमात्मा स्वयं प्रत्यक्ष हो आया था और संसार उस अमृत रूप के समक्ष नत्मस्तक हो रहा था :

आदि पुरखु आदेसु करि आदि पुरख आदेसु कराइआ।
एकंकार अकारु करि गुरु गोविंदु नाउ सदवाइआ।
पारब्रहमु पूरन ब्रहमु निरगुण सरगुण अलखु लखाइआ। (भाई गुरदास जी, वार २५:१)

भाई गुरदास जी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की प्रतिष्ठा का वर्णन करते हुए कहा है कि उन्हें परमात्मा ने स्वयं अपनी सारी शक्तियों से विभूषित (शोभित) कर संसार को उनकी महानता से परिचित कराया। उनमें परमात्मा ने प्रकट हो संसार को दर्शन दिए। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब निराकार परमात्मा के आकार रूप थे, इसलिए उनके निर्णय भी दृढ़ता और नि:संकोच भाव से लिए गए स्पष्ट निर्णय थे। उन्हें भविष्य दिख रहा था कि सिक्ख पंथ को किस दिशा में ले जाने से मानवता का कल्याण हो सकेगा। कलियुग में धर्म का तेजी से पतन हो रहा था और अधर्म शक्तिशाली हो रहा था। इसे रोकने के लिए धर्म को अधिक शक्तिशाली बनाने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं था। शक्ति को धर्म से जोड़ना और सिक्खों का अस्त्र-शस्त्र से परिचय कराना श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का अत्यंत दूरगामी कदम था। सिक्खों को अप्रत्क्ष रूप से खालसा बनाने की प्रक्रिया श्री गुरु नानक साहिब ने उनके अंदर का भय दूर कर आरंभ की थी, जिसे श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने एक निश्चित दिशा में मोड़ा। गुरु साहिब ने गुरुआई पर आसीन होने के तीन साल में ही एक और ऐतिहासिक कदम

Final

उठाया तथा श्री अमृतसर साहिब में श्री हरिमंदर साहिब के ठीक सामने श्री अकाल तख़्त साहिब बनवाया। कहते हैं कि इसके निर्माण की पूरी सेवा बाबा बुड्ढा जी और भाई गुरदास जी ने की। इससे यह सहज आंकलन किया जा सकता है कि गुरु साहिब की दृष्टि में श्री अकाल तख़्त साहिब का कितना अधिक महत्त्व था। अब सिक्खों की गतिविधियों में दो प्रमुख केंद्र बन गए। एक श्री हरिमंदर साहिब, जहां श्री गुरु अरजन साहिब के समय श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश हुआ था। वहां गुरबाणी का कीर्तन होता और सिक्खों को गुरु-शबद के साथ जोड़ा जाता था। दूसरा, श्री अकाल तख़्त साहिब, जहां श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब नित्य दोपहर के बाद आसन पर बैठते और सिक्ख संगत से मिलते। यहां वे सिक्खों से विभिन्न विषयों पर चर्चा करते, उनके संशय दूर करते और धार्मिक, सामाजिक मर्यादायें समझाते। यहां शारीरिक बल प्राप्त करने के अभ्यास, कसरतें होतीं और युद्ध के दांव-पेंच भी सिखाये जाते। सायंकाल श्री हरिमंदर साहिब में नितनेम की मर्यादा पूरी होने के बाद सिक्ख रात्रि-विश्राम को जाते। इस तरह धर्म-शक्ति और सांसारिक बल का अनूठा समन्वय बन गया। श्री अकाल तख़्त साहिब नाम रखे जाने से भी धर्म-शक्ति की नई मर्यादा स्थापित हुई। धर्म का राजसी स्वरूप सामने आया जो संसार की किसी भी राज-सत्ता से ऊपर था। धर्म-जगत में यह पहली बार हुआ था। शायद आज भी यही बात सिक्ख धर्म को अन्य सारे धर्मों से विलक्षण बनाती है। यही एक ऐसा धर्म है जहां परमात्मा, वाहिगुरु को सारे राजाओं का राजा माना जाता है, जिसके समक्ष सभी समान हैं। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की शान सांसारिक महाराजा जैसी बनी। आज भी श्री गुरु ग्रंथ साहिब की शोभा के सामने संसार की बड़ी से बड़ी वस्तु तुच्छ है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के आसन के ऊपर शानदार चंदोवा ताना जाता है, चंवर की जाती है और गुरु-दरबार में सबसे ऊंचे आसन पर सुशोभित किया जाता है। प्रतिदिन सुबह-शाम श्री गुरु ग्रंथ साहिब का हुक्म लिया जाता है। शासक आए और चले गए, किंतु श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बादशाहत आज भी कायम है और जब तक सृष्टि है तब तक रहने वाली है। यह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की महान कृपा थी कि धर्म की राजशाही से संसार अवगत हुआ। जिस धर्म की रक्षा के लिए क्षत्रियों को आगे आना पड़ता था वह अब स्वयं अपनी रक्षा करने में समर्थ हो गया। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को सच्चा पातशाह अथवा सच्चा महाराज कहा जाने लगा।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जानते थे कि उनके ये नियम धर्म-मंडल और समाज को आसानी से ग्राह्य नहीं होंगे। उन्होंने जब धर्म-यात्रायें आरंभ कीं तो उनसे तरह-तरह के प्रश्न पूछे गए। गुरु साहिब ने सारे सवालों का बड़े ही संयम से उत्तर दिया और सभी की जिज्ञासाओं को शांत किया। गुरु साहिब ने कहा कि उनका राजसी बल निर्बल की रक्षा और दुष्ट के दमन के लिए है। उनका मार्ग विशुद्ध धर्म और मानवता का है :

हरि की वडिआई वडी है हरि कीरतनु हरि का ॥
हरि की वडिआई वडी है जा निआउ है धरम का ॥
हरि की वडिआई वडी है जा फलु है जीअ का ॥
हरि की वडिआई वडी है जा न सुणई कहिआ चुगल का ॥
हरि की वडिआई वडी है अपुछिआ दानु देवका ॥
(पन्ना ८४)

Final

परमात्मा, धर्म की सर्वोच्चता इसलिए है, क्योंकि वहां धर्म की चर्चा है और न्याय की प्रमुखता है। यह सर्वोच्चता सभी के मन को संतुष्ट और संतृप्त कर देने में है। यहां अनीति, अधर्म का कोई स्थान नहीं है। धर्म की सर्वोच्चता सभी को समान रूप से पालन करने और सभी को बिना भेदभाव जीवन का आधार देने में है। इससे बड़ा राजधर्म और क्या हो सकता है? कोई भी शासक, कोई भी राज्य आज तक इस कसौटी पर खरा नहीं उतरा। परमात्मा और धर्म ही हैं जो इसे करने में समर्थ हैं और कर रहे हैं। इसी कारण सिक्ख गुरु साहिबान ने परमात्मा को सदा अटल, अविचल रहने वाला राज कहा-- *"निहचल राजु है सदा तिसु केरा न आवै न जाई ॥"* धर्म दृढ़ता और अमरत्व का प्रतीक है। यह विश्वास दिलाए बिना मानव समाज को धर्म और परमात्मा से जोड़ा नहीं जा सकता था। जो प्रत्यक्ष है उसी पर विश्वास करना समाज का स्वभाव था। गुरु साहिबान ने परमात्मा के निराकार स्वरूप की बात की थी। जो विचारधारायें परमात्मा के सगुण स्वरूप में विश्वास करती थीं उनके पास भी परमात्मा को प्रत्यक्ष करने का कोई सूत्र नहीं था। यह सबसे उत्तम विकल्प था कि परमात्मा को उसके गुणों के माध्यम से प्रकट किया जाए, जिस पर लोगों का विश्वास टिक सके। श्री हरिमंदर साहिब और श्री अकाल तख़्त साहिब के समन्वय से इसे संभव करने का उपकार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने किया। धर्म, जो वास्तव में सदा से ही सर्वश्रेष्ठ था, अब दिख भी रहा था। गुरु साहिब की शान धर्म की शान बन रही थी।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब अपनी सैद्धांतिक स्पष्टता के कारण किसी भी विरोध, आलोचना और चुनौती से पूरी तरह बेपरवाह थे। उनकी मीरी और पीरी की अवधारणा संसार के लिए नई थी, किंतु सिक्ख पंथ के लिए नहीं। शीश को तली पर रखकर धर्म के लिए आगे आने की बात श्री गुरु नानक साहिब की प्राथमिक शर्त थी। इसका अर्थ था कि वे धार्मिक पुरुष को निर्भीक, त्यागी और बलिदानी के रूप में देखना चाहते थे। निर्भीक होकर धर्म का पालन करना और धर्म की रक्षा करना। परमात्मा के मार्ग पर चलने के लिए विकारों का त्याग करना और संसार के मोह का भी। धर्म के लिए भावनात्मक तौर पर पूर्णत: समर्पित होना और आवश्यकता पड़ने पर जीवन तक अर्पित कर देना। इससे धर्म की प्रतिष्ठा कायम होती थी। धर्म संसार की किसी भी शक्ति से ऊपर था। इसका दूसरा अर्थ था कि समस्त संसार धर्म के अधीन है, उससे बाहर नहीं है :

साहु हमारा ठाकुरु भारा हम तिस के वणजारे ॥
जीउ पिंडु सभ रासि तिसै की मारि आपे जीवाले ॥
(पन्ना १५५)

मीरी और पीरी का आधार ही एकरूपता का आधार था। इसमें मानव-समानता और ईश्वर की सत्ता के दो अति महत्त्वपूर्ण तत्व शामिल थे। परमात्मा ने जिसे भी जो कुछ भी दिया है धर्म के हित के लिए दिया है। वह दे सकता है तो ले भी सकता है। यही उसकी सत्ता है जो आदि काल से चल रही है। परमात्मा द्वारा दिए गए गुणों और बल का उपयोग परमात्मा की इच्छा के अनुसार करना ही धर्म है-- *"हम तिस के वणजारे ॥"* श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने इसे सिद्ध कर प्रेरक उदाहरण स्थापित किया। गुरु साहिब की तेग उठी तो मुगल शासक जहांगीर के जीवन को बचाने के लिए। उन्होंने तेग के एक तेज वार

Final

से ही शेर के टुकड़े कर दिए। उन्होंने अपनी फौज को साथ लेकर चार युद्ध किए मुगल शासक की धर्मान्ध नीतियों की राह रोकने के लिए। उन्होंने सिक्खों को बलवान और स्वस्थ रहने की प्रेरणा दी, इसलिए कि वे तन-मन से परमात्मा की भक्ति और मानवता की सेवा कर सकें। उन्होंने एक ओर ग्वालियर किले में शांतिपूर्ण तरीके से कैद रह कर सिक्खों को सहनशील होना सिखाया तो दूसरी ओर उनमें सभी युद्धों में विजयी रह कर वैरी को परास्त करने का कौशल भी भरा। सिक्खों को सशस्त्र करना श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के मिशन का आयाम था, ध्येय नहीं।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का पूरा ध्यान सिक्ख पंथ की शिक्षाओं के प्रचार और गुरबाणी के प्रसार पर केंद्रित था। वे सिक्खों को न केवल गुरबाणी पढ़ने के लिए प्रेरित करते, उनकी वृत्ति पर दृष्टि भी रखते थे। भाई गोपाल जी की कथा सर्वविदित है कि कैसे गुरु साहिब ने एक दिन दरबार में उन्हें 'जपु जी साहिब' का पाठ पढ़कर सुनाने को कहा था। गुरबाणी का पाठ करना ही पर्याप्त नहीं, उसे किस भावना और किस एकाग्रता से किया जाए, इस पर भी गुरु साहिब जोर दिया करते थे। गुरु साहिब का दरबार सभी तरह की भ्रांतियों और शंकाओं से उबार कर आत्मिक सहजता और सुख का दान देने वाला दरबार था। भाई गुरदास जी ने गुरु साहिब को 'सदा विगसंदा' भी कह कर संबोधित किया है।

एक बार गुरु साहिब के दरबार में एक बड़ा अहंकारी, दंभी ब्राह्मण नित्यानंद आया। गुरु साहिब ने उसे पूरा आदर-सत्कार दिया। नित्यानंद ने वहां पुराणों का पाठ आरंभ कर दिया। उसने गरुड़ पुराण का भी पाठ किया, जिसके अनुसार मनुष्य की मृत्यु होने के बाद उसकी आत्मा को परलोक तक पहुंचने में एक साल लग जाता है। इस पर वहां मौजूद एक सिक्ख ने कहा कि गुरु साहिब की कृपा से मैं तो वहां बारह घंटे में ही पहुंच जाऊंगा। एक अन्य सिक्ख ने कहा कि वहां जाने की आवश्यकता ही क्या है। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने कहा कि जो मनुष्य धर्म के मार्ग पर चलता है उसे धर्मराज (यमराज) से कुछ लेना-देना नहीं रह जाता। पंचम पातशाह का फरमान है :

काल जाल अरु महा जंजाला छुटके जमहि डरा ॥
आइउ दुख हरण करुणापति गहिउ चरण आसरा ॥
(पन्ना ७०१)

जो वाहिगुरु के बताये मार्ग पर चलते हुए परमात्मा को अपने जीवन का आधार बना लेते हैं, वे काल के भय और सारे दुखों से मुक्त हो जाते हैं। परमात्मा की कृपा से उनका जीवन सुखद हो जाता है। नित्यानंद का अंतर मन गुरु साहिब के वचन सुन कर प्रकाशित हो उठा और सारा अभिमान-अहंकार लुप्त हो गया। वह गुरु साहिब का शिष्य बन गया। ऐसे अनगिनत भटके हुए लोगों का उद्धार गुरु साहिब ने किया और उन्हें गुरबाणी से जोड़ कर परमात्मा की ओर उन्मुख किया।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने सिक्ख पंथ को आगे बढ़ाने के लिए मज़बूत आधार प्रदान किया। वे सिक्खों के मन में धर्म के लिए भावना व उत्साह पैदा करने में सफल हुए। उनका मीरी-पीरी का सिद्धांत आज के विश्व की सारी समस्याओं और अशांति का एकमात्र निदान है। जब तक शक्ति धर्म के अधीन और मर्यादित नहीं होगी, संसार में हिंसा और युद्धों के बादल मंडराते रहेंगे।

Final

भक्त कबीर जी की बाणी तथा विचारधारा

*-डॉ. परमजीत कौर**

मध्यकालीन भक्ति लहर के प्रवर्त्तक, क्रांतिकारी, नैतिक मूल्यों के प्रतिपादक, कोरे कर्मकांडों, रीति-रिवाजों तथा अंधविश्वासों का खंडन करने वाले, समाज-सुधारक भक्त कबीर जी का जन्म बनारस शहर में मई, १३९८ ई में तथा देहांत मगहर की धरती पर नवंबर, १५१८ ई में हुआ माना जाता है। भक्त जी ने स्वयं इसका उल्लेख किया है :

सगल जनमु सिव पुरी गवाइआ ॥
मरती बार मगहरि उठि आइआ ॥२॥
बहुतु बरस तपु कीआ कासी ॥
मरनु भइआ मगहर की बासी ॥ (पन्ना ३२६)

आध्यात्मिकता से ओत-प्रोत, अज्ञानता की नींद में सोये हुए मन को जागृत कर जीव को सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक उन्नति के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करने में सक्षम आपकी बाणी में मानव-जीवन के उद्देश्य, शरीर की नश्वरता, माया-मोह, कोरे कर्मकांड तथा सामाजिक कुरीतियों का खंडन, गुरु की आवश्यकता, मन, परमात्मा के नाम का सिमरन, सतसंगति, प्रभु-प्रेम तथा उच्च आत्मिक अवस्था आदि विषयों पर प्रकाश डाला गया है।

मानव-जीवन का उद्देश्य : चौरासी लाख योनियों में भटक कर सौभाग्य से प्राप्त इस मानव-जीवन का उद्देश्य जन्म-मरण से मुक्ति होना चाहिए :

लख चउरासीह जोनि भ्रमि आइओ ॥
अब के छुटके ठउर न ठाइओ ॥३॥
कहु कबीर भजु सारिगपानी ॥
आवत दीसै जात न जानी ॥ (पन्ना ३३७)

भक्त जी समझा रहे हैं कि यह जीवन बार-बार प्राप्त नहीं होता, जैसे पके हुए फल भूमि पर गिर जाने पर दोबारा डाली से नहीं लगाए जा सकते। परमात्मा का नाम-सिमरन कर परमात्मा में लीन होने का यत्न करना चाहिए :

- भजहु गुोबिंद भूलि मत जाहु ॥
मानस जनम का एही लाहु ॥ . . .
इही तेरा अउसरु इह तेरी बार ॥
घट भीतरि तू देखु बिचारि ॥ (पन्ना ११५९)
-भगति बिनु बिरथे जनमु गइओ ॥
साधसंगति भगवान भजन बिनु
कही न सचु रहिओ ॥ (पन्ना ३३६)

शरीर की नश्वरता : शरीर क्षणभंगुर है। जैसे मिट्टी का बर्तन थोड़ी-सी ठोकर लगने से टूट जाता है वैसे ही इस शरीर का कोई भरोसा नहीं है, कब साथ छोड़ जाए :

कहा बिसासा इस भांडे का इतनकु लागै ठनका ॥
(पन्ना १२५३)

धन, यौवन का गर्व नहीं करना चाहिए :

रामु सिमरु पछुताहिगा मन ॥
पापी जीअरा लोभु करतु है
आजु कालि उठि जाहिगा ॥१॥ रहाउ ॥
लालच लागे जनमु गवाइआ माइआ भरम भुलाहिगा ॥
धन जोबन का गरबु न कीजै
कागद जिउ गलि जाहिगा ॥ (पन्ना ११०६)

भक्त कबीर जी समझा रहे हैं कि जिस शरीर का मनुष्य गर्व करता है और सारा दिन जिसे संवारने में ही लगा रहता है, वह तो हड्डियों, चर्म, रक्त तथा विष्टा से भरा हुआ दुर्गंधपूर्ण है :

चलत कत टेढे टेढे टेढे ॥

**६२०, गली नं. १, छोटी लाईन, संतपुरा, यमुनानगर (हरियाणा) १३५००१, फोन : ९८१२३-५८१८६*

Final

असति चरम बिसटा के मूंदे दुरगंध ही के बेढे ॥
(पन्ना ११२४)

ऊपर से सुंदर दिखने वाले शरीर को देखकर अहंकार नहीं करना चाहिए। प्राण तथा शरीर का साथ स्थायी नहीं है :

कबीर गरबु न कीजीऐ देही देखि सुरंग ॥
आजु कालि् तजि जाहुगे जिउ कांचुरी भुयंग ॥
(पन्ना १३६६)

माया-मोह : परमात्मा के साथ मन को जोड़ने के लिए माया-मोह का त्याग करना आवश्यक है। धन-पदार्थ, सुख के साधन, स्त्री, पुत्र, पति, परिवार का मोह, मान-प्रतिष्ठा की चाह आदि जिस कारण से भी परमात्मा भूल जाता है, सब माया है। भक्त कबीर जी के अनुसार केवल मनुष्य ही नहीं पशु-पक्षी भी माया में लिप्त हैं। पानी में रहने वाली मछली, दीपक पर जलने वाले पतंगे, हाथी, भंवरे सब माया से प्रभावित हैं। चौरासी सिद्ध माया में खेल रहे हैं। यति भी माया के गुलाम हैं :

- जल महि मीन माइआ के बेधे ॥
दीपक पतंग माइआ के छेदे ॥
काम माइआ कुंचर कउ बिआपै ॥
भुइअंगम भ्रिंग माइआ महि खापे ॥१॥
माइआ ऐसी मोहनी भाई ॥
जेते जीअ तेते डहकाई ॥ (पन्ना ११६०)
- सरपनी ते ऊपरि नही बलीआ ॥
जिनि ब्रहमा बिसनु महादेउ छलीआ ॥
(पन्ना ४८०)

माया के सुख चाहे किसी भी रूप में हों अच्छे लगते हैं, लेकिन जैसे-जैसे इनसे प्रीति बढ़ती है ये दुखदायी हो जाते हैं। तृष्णा बढ़ती जाती है। माया के नशे में अपने को कर्त्ता समझता हुआ जीव अहंकार के मद में मृत्यु को भूल जाता है तथा सारी उम्र व्यर्थ व्यतीत कर देता है :

- लालच झूठ बिकार महा मद
इह बिधि अउध बिहानि ॥
कहि कबीर अंत की बेर आइ
लागो कालु निदानि ॥ (पन्ना ११२४)
- जागतु सोइआ जनमु गवाइआ ॥
मालु धनु जोरिआ भइआ पराइआ ॥
कहु कबीर तेई नर भूले ॥
खसमु बिसारि माटी संगि रूले ॥ (पन्ना ७९२)

माया का मोह मनुष्य को नाम-हीन कर देता है। भक्त कबीर जी के मतानुसार मनुष्य यह जानता है, लेकिन माया-मोह ने उसके ज्ञान रूपी हीरे को मानों चुरा लिया है :

बाबा माइआ मोह हितु कीन्ह ॥
जिनि गिआनु रतनु हिरि लीन्ह ॥ (पन्ना ४८२)

माया के मोह रूपी अंधकार से ग्रस्त जीव अपनी सूझ-बूझ का अहंकार करता हुआ अपनी तरफ से धार्मिक कार्य करता है, पर प्रभु की भक्ति की सार नहीं जानता, इसलिए उसके आत्मिक जीवन का एक भी कार्य नहीं संवरता अर्थात् उसको आत्मिक लाभ नहीं मिलता :

जब लगु मेरी मेरी करै ॥
तब लगु काजु एकु नही सरै ॥ (पन्ना ११६०)

भक्ति तभी फलदायक होती है जब जाति, कुल, धन, पदार्थ आदि का अहंकार छोड़ कर की जाए। भक्त कबीर जी समझाते हैं कि जब तक इस हृदय रूपी वन में अहंकार रूपी शेर रहता है तब तक हृदय रूपी वन में फूल नहीं खिलते अर्थात् कोमल गुण नहीं पनपते। जब विनम्रता आ जाती है तभी गुण रूपी फूल उगते हैं :

जब लगु सिंघु रहै बन माहि ॥
तब लगु बनु फूलै ही नाहि ॥
जब ही सिआरु सिंघ कउ खाइ ॥
फूलि रही सगली बनराइ ॥ (पन्ना ११६१)

कर्मकांड तथा कुरीतियों का खंडन : प्रभु-मिलाप की इच्छा रखने वाले कई लोग तरह-तरह के धार्मिक पहनावों तथा कर्मकांडों का आश्रय लेते हैं, तीर्थों पर भ्रमण करते हैं, घर छोड़ कर जंगलों

Final

में रहते हैं। कई ठंडे जल में समाधिस्थ रहते हैं या शरीर पर राख मल लेते हैं, जटायें बढ़ा लेते हैं। कई दिन-रात नग्न फिरते रहते हैं। कई रात को सोते नहीं, सदा जागते रहते हैं। कर्मकांड को महत्व देने वाले मनुष्यों का लक्ष्य बेशक प्रभु-मिलाप होता हो लेकिन ऐसे मनुष्य कर्मकांड के जाल में ही फंसकर रह जाते हैं, अहंकारी हो जाते हैं, काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि विकारों से मुक्त नहीं होते। सारे विकार उनके भीतर दबे रहते हैं :

भक्त कबीर जी समझा रहे हैं :

- ग्रिहु तजि बन खंड जाईऐ चुनि खाईऐ कंदा ॥
अजहु बिकार न छोडई पापी मनु मंदा ॥
(पन्ना ८५५)

- जेते जतन करत ते डूबे
भव सागरु नही तारिओ रे ॥
करम धरम करते बहु संजम
अहंबुधि मनु जारिओ रे ॥ (पन्ना ३३५)

भक्त कबीर जी सचेत कर रहे हैं कि तीर्थ-स्नान आदि फोकट कर्मों से व्यक्ति दूसरों की दृष्टि में ऊंचा उठ सकता है, धार्मिक कहला सकता है, मगर तीर्थ-स्नान से मन की मैल नहीं उतर सकती :

अंतरि मैलु जे तीरथ नावै तिसु बैकुंठ न जानां ॥
लोक पतीणे कछू न होवै नाही रामु अयाना ॥
(पन्ना ४८४)

वास्तव में दुर्बुद्धि मनुष्य के अंदर मीरासन है, बेरहम कसाइण है; पर-निंदा अंदर की चमारन है तथा क्रोध चंडाल है। यदि ये सारे शरीर के अंदर हैं तो भिन्न-भिन्न तीर्थों पर जाकर शरीर को धोने (स्नान करने) से अवगुण दूर नहीं हो सकते, केवल शरीर की मैल ही उतर सकती है :

कांइआ मांजसि कउन गुनां ॥
जउ घट भीतरि है मलनां ॥ (पन्ना ६५६)

इसी प्रकार नग्न रह कर, जंगलों में भ्रमण कर, सिर मुंडाकर, साधु बन कर या बाल-यति बने रह कर मनुष्य संसार रूपी भवसागर से पार नहीं उतर सकता :

- नगन फिरत जौ पाईऐ जोगु ॥
बन का मिरगु मुकति सभु होगु ॥१॥
किआ नागे किआ बाधे चाम ॥
जब नही चीनसि आतम राम ॥ (पन्ना ३२४)
- माथे तिलकु हथि माला बानां ॥
लोगन रामु खिलउना जानां ॥ (पन्ना ११५८)

समाज में फैली कुरीतियों का खंडन करते हुए भक्त कबीर जी ताड़ना कर रहे हैं कि माता-पिता के जीवित अवस्था में रहते हुए उनकी सेवा न करके मृत्योपरांत श्राद्ध आदि करने से पुण्य की प्राप्ति नहीं होती :

जीवत पितर न मानै कोऊ मूंए सिराध कराही ॥
पितर भी बपुरे कहु किउ
पावहि कऊआ कूकर खाही ॥ (पन्ना ३३२)

सूतक के बारे में भक्त कबीर जी फरमान करते हैं कि यदि जीवों के जन्म तथा मरण से सूतक-पातक की अपवित्रता पैदा हो जाती है तो पानी में भी सूतक है, धरती पर भी सूतक है। हर जगह सूतक है :

जलि है सूतकु थलि है सूतकु सूतक ओपति होई ॥
जनमे सूतकु मूए फुनि सूतकु सूतक परज बिगोई ॥
कहु रे पंडीआ कउन पवीता ॥
ऐसा गिआनु जपहु मेरे मीता ॥१॥ रहाउ ॥
नैनहु सूतकु बैनहु सूतकु सूतकु स्रवनी होई ॥
ऊठत बैठत सूतकु लागै सूतकु परै रसोई ॥२॥
फासन की बिधि सभु कोऊ जानै छूटन की इकु कोई ॥
कहि कबीर रामु रिदै बिचारै सूतकु तिनै न होई ॥
(पन्ना ३३१)

जाति-प्रथा का आश्रय लेकर दूसरों को नीच समझने वाले लोगों को भक्त कबीर जी समझा रहे हैं कि सारे जीव परमात्मा का अंश हैं। गर्भ-काल में किसी की कोई जाति नहीं होती। ब्राह्मणों पर व्यंग्य करते हुए आप पूछते हैं कि क्या ब्राह्मणों के शरीर में रक्त की जगह

Final

दूध है? उनके मत में ब्राह्मण वह है जो ब्रह्म अर्थात् परमात्मा की बंदगी करता है :

गरभ वास महि कुलु नही जाती ॥
ब्रहम बिंदु ते सभ उतपाती ॥१॥
कहु रे पंडित बामन कब के होए ॥
बामन कहि कहि जनमु मत खोए ॥१॥ रहाउ ॥
जौ तूं ब्राहमणु ब्रहमणी जाइआ ॥
तउ आन बाट काहे नही आइआ ॥२॥
तुम कत ब्राहमण हम कत सूद ॥
हम कत लोहू तुम कत दूध ॥ (पन्ना ३२४)

गुरु : परमात्मा प्रत्येक शरीर में गुप्त रूप से रहता है, परंतु जीव मन की अस्थिरता तथा माया के मोह के कारण अंदर बसते प्रभु को जान नहीं सकता, सदा माया के वश में रहता है। गुरु की शरण में आए बिना मोह के बंधनों से मुक्ति नहीं मिलती तथा आत्मिक जीवन की समझ नहीं आती। भक्त कबीर जी के अनुसार जैसे मस्त हाथी को महावत अपने अंकुश से वश में कर लेता है, वैसे ही माया-मोह में मस्त, भटकते हुए चंचल मन को गुरु की शरण में आकर ही वश में किया जा सकता है। यदि मन (हाथी) वश में आ जाए तो कामादि वैरी हार जाते हैं :

थाके पंच दूत सभ तसकर आप आपणै भ्रमते ॥
थाका मनु कुंचर उरु थाका तेजु सूतु धरि रमते ॥
(पन्ना ४८०)

परमात्मा का नाम गुरु-दर से ही प्राप्त होता है। गुरु मनुष्य को अहंकार से मुक्त कर उसके हृदय में नाम का प्रकाश कर देता है :

कबीर आई मुझहि पहि अनिक करे करि भेस ॥
हम राखे गुर आपने उनि कीनो आदेसु ॥
(पन्ना १३६४)

जिस जीव को सूरमा सतिगुरु अपने शबद का तीर मारता है, तीर लगने से ही वह मनुष्य अहंकार-रहित हो जाता है तथा उसका हृदय प्रभु-चरणों में लीन हो जाता है :

कबीर सतिगुर सूरमे बाहिआ बानु जु एकु ॥
लागत ही भुइ गिरि परिआ परा करेजे छेकु ॥
(पन्ना १३७४)

भक्त कबीर जी गुरु के महत्त्व को विस्तार से समझाते हुए कहते हैं कि मनुष्य का शरीर मानों किला है, जिसमें काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार पांच चौधरी शरीर से सदा मामला मांगते हैं। शुभ गुण रूपी प्रजा इसमें रह नहीं सकती। जिस जीव को गुरु मिल जाता है वह इन चौधरियों के प्रकोप से बच जाता है :

एकु कोटु पंच सिकदारा पंचे मागहि हाला ॥
जिमी नाही मै किसी की बोई ऐसा देनु दुखाला ॥१॥
हरि के लोगा मो कउ नीति डसै पटवारी ॥
ऊपरि भुजा करि मै गुर पहि पुकारिआ तिनि हउ लीआ उबारी ॥ (पन्ना ७९३)

भक्त कबीर जी ने योग के साधनों के स्थान पर गुरु की शरण में आकर श्वास-श्वास नाम-सिमरन के लिए कहा है :

सो गुरु करहु जि बहुरि न करना ॥
सो पदु रवहु जि बहुरि न रवना ॥ (पन्ना ३२७)

मन : मन चंचल है। इसको स्थिर करने के लिए अनेक यत्न करने पड़ते हैं। मन का आश्रय लेकर ही कामादि विकार दौड़-भाग करते हैं। मन की सारी क्रियाओं का मनुष्य के जीवन पर प्रभाव पड़ता है। मन मंद कर्मों की ओर शीघ्र दौड़ता है। मन की वृत्तियों को वश में करने का यत्न ही मनुष्य को शुभ कर्मों की ओर प्रेरित करता है। जंगलों में जाकर, विभिन्न वेश धारण कर या सिर मुंडवा कर मन को वश में नहीं किया जा सकता। मन विषयों से उपराम नहीं होता :

- कबीर मनु मूंडिआ नही केस मुंडाए कांइ ॥
जो किछु कीआ सो मन कीआ मूंडा मूंडु अजांइ ॥
(पन्ना १३६९)

- बनहि बसे किउ पाईऐ जउ लउ मनहु न तजहि बिकार ॥ (पन्ना ११०३)

प्रभु के नाम को हृदय में बसाने के लिए

Final

पहले मन को खोजना पड़ता है। माया के साथ मिलकर मन माया का रूप हो जाता है। आनंद रूपी हरि से मिलकर यह आनंद स्वरूप हो जाता है। शरीर के साथ मिलकर शरीर रूप हो जाता है। जब गुरु का आश्रय लेकर मन वश में कर लिया जाता है तो प्रसन्नता की अवस्था में टिककर सर्वव्यापक परमात्मा की ही बातें करता है :

इहु मनु सकती इहु मनु सीउ ॥
इहु मनु पंच तत को जीउ ॥
इहु मनु ले जउ उनमनि रहै ॥
तउ तीनि लोक की बातै कहै ॥ (पन्ना ३४२)

परमात्मा के नाम का सिमरन : सर्वव्यापक, अंतर्यामी, अगम, अगोचर परमात्मा का आश्रय लेना ही सुखी जीवन का आधार है। परमात्मा के बराबर अन्य कोई नहीं है। सारा संसार परमात्मा के नूर से ही पैदा हुआ है :

अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥
(पन्ना १३४९)

परमात्मा की ही आराधना करनी चाहिए। अन्य देवी-देवता, मढ़ी-मसाण आदि की पूजा करने से ज़िंदगी का समय व्यर्थ चला जाता है। भक्त कबीर जी ताड़ना कर रहे हैं :

रे जीअ निलज लाज तुोहि नाही ॥
हरि तजि कत काहू के जांही ॥१॥ रहाउ ॥
जा को ठाकुरु ऊचा होई ॥
सो जनु पर घर जात न सोही ॥ (पन्ना ३३०)

परमात्मा के नाम का सिमरन ही वो रास्ता है जो परमात्मा तक पहुंचाता है। नाम-सिमरन के बिना परमात्मा के साथ संबंध नहीं बनता। भक्त कबीर जी का कथन है :

जिह सिमरनि होइ मुकति दुआरु ॥
जाहि बैकुंठि नही संसारि ॥
निरभउ कै घरि बजावहि तूर ॥
अनहद बजहि सदा भरपूर ॥१॥
ऐसा सिमरनु करि मन माहि ॥
बिनु सिमरन मुकति कत नाहि ॥ (पन्ना ९७१)

सतिगुरु के ज्ञान से, गुरमति अनुसार जीवन बनाने से वहम-भ्रम दूर हो जाते हैं, तृष्णा, लालच समाप्त हो जाता है। ज्ञान की आंधी के बाद नाम की वर्षा होती है। उसमें भक्त कबीर जी का मन भीग जाता है। जैसे-जैसे नाम जपता है, मन में शांति तथा स्थिरता पैदा हो जाती है, नाम-रस का आनंद आने लगता है :

देखौ भाई ग्यान की आई आंधी ॥
सभै उडानी भ्रम की टाटी
रहै न माइआ बांधी ॥१॥ रहाउ ॥
दुचिते की दुइ थूनि गिरानी मोह बलेडा टूटा ॥
तिसना छानि परी धर ऊपरि दुरमति भांडा फूटा ॥
आंधी पाछे जो जलु बरखै तिहि तेरा जनु भीनां ॥
कहि कबीर मनि भइआ प्रगासा उदै भानु जब चीना ॥ (पन्ना ३३१)

मनुष्य जब तक नाम-रस का आस्वादन नहीं करता तब तक उसे अन्य रसों के स्वाद अच्छे लगते हैं। जब प्रभु के नाम का आनंद आने लगे तो मन की तृष्णा मिट जाती है, मन विषयों के रस के पीछे नहीं भागता :

- रारा रसु निरस करि जानिआ ॥
होइ निरस सु रसु पहिचानिआ ॥
इह रस छाडे उह रसु आवा ॥
उह रसु पीआ इह रसु नही भावा ॥
(पन्ना ३४२)

- राम रसु पीआ रे ॥
जिह रस बिसरि गए रस अउर ॥ (पन्ना ३३७)
- कहि कबीर सगले मद छूछे इहै महा रसु साचो रे ॥
(पन्ना ९६९)

अहंकार नाम-सिमरन के रास्ते में सबसे बड़ी बाधा है। जब अहंकार समाप्त हो जाता है तभी नाम-सिमरन फलदायक होता है :

- कबीर जा दिन हउ मूआ पाछै भइआ अनंदु ॥
मोहि मिलिओ प्रभु आपना संगी भजहि गोबिंदु ॥
(पन्ना १३६४)

Final

- जब लगु मेरी मेरी करै ॥
तब लगु काजु एकु नही सरै ॥ (पन्ना ११६०)

नाम-रस को प्राप्त करने के लिए आत्मिक ज्ञान, ध्यान, प्रभु का डर, माया-मोह का त्याग तथा काम, क्रोध को जलाना आवश्यक है :

गुडु करि गिआनु धिआनु करि
महूआ भउ भाठी मन धारा ॥
सुखमन नारी सहज समानी पीवै पीवनहारा ॥१॥
अउधू मेरा मनु मतवारा ॥
उनमद चढा मदन रसु चाखिआ
त्रिभवन भइआ उजिआरा ॥१॥ रहाउ ॥
दुइ पुर जोरि रसाई भाठी पीउ महा रसु भारी ॥
कामु क्रोधु दुइ कीए जलेता छूटि गई संसारी ॥
(पन्ना ९६९)

सतसंगति : सतसंगति नाम-सिमरन में सहायक होती है। जैसे चंदन का छोटा-सा वृक्ष नजदीक उगे हुए ढाक, पलाश जैसे वृक्षों को सुगंधित कर देता है वैसे ही प्रभु-प्राप्ति के मार्ग पर चलने वाले की संगति नाम-सिमरन की प्रेरणा देती है :

- कबीर संगत करीऐ साध की अंति करै निरबाहु ॥
साकत संगु न कीजीऐ जा ते होइ बिनाहु ॥
(पन्ना १३६९)
- कबीर चंदन का बिरवा भला बेढ़िओ ढाक पलास ॥
ओइ भी चंदनु होइ रहे बसे जु चंदन पासि ॥
(पन्ना १३६५)

साधसंगति में आकर मन का अहंकार दूर हो जाता है। भक्त कबीर जी के मतानुसार साधसंगति बैकुंठ है :

कहु कबीर इह कहीऐ काहि ॥
साधसंगति बैकुंठै आहि ॥ (पन्ना ३२५)

भक्त कबीर जी समझा रहे हैं कि साधसंगति न करने वाला, संसार के झूठे धंधों में मस्त जीव काग, कुत्ते तथा सूअर के समान भटकता हुआ यहां से चला जाएगा :

साधसंगति कबहू नही कीनी रचिओ धंधै झूठ ॥
सुआन सूकर बाइस जिवै भटकतु चालिओ ऊठि ॥
(पन्ना ११०५)

प्रभु-प्रेम : प्रभु की प्रीति आत्मिक आनंद देती है, सारे दुख-संताप मिट जाते हैं। प्रेम के बिना प्रभु की भक्ति फलदायक नहीं होती। भक्त कबीर जी के मतानुसार जिसने जितना प्रेम किया है उसने उतनी ही अकाल पुरख की झलक देखी है :

कहु कबीर जिनि दीआ पलीता तिनि तैसी झल देखी ॥ (पन्ना ३३३)

हृदय में प्रेम पैदा करने के लिए मन में से शरीर का मोह, माया का मोह त्यागना जरूरी है। जब तक मन शरीर से जुड़ा रहता है माया की तृष्णा समाप्त नहीं होती, प्रेम का आनंद नहीं लिया जा सकता :

- जोड़ी जुड़ै न तोड़ी तूटै जब लगु होइ बिनासी ॥
का को ठाकुरु का को सेवकु को काहू कै जासी ॥
(पन्ना ३३४)
- रे नर नाव चउड़ि कत बोड़ी ॥
हरि सिउ तोड़ि बिखिआ संगि जोड़ी ॥
(पन्ना ३२८)
- जब लगु घट महि दूजी आन ॥
तउ लउ महलि न लाभै जान ॥ (पन्ना ३४५)

प्रभु-प्रेम दुनियावी पदार्थों, धन-दौलत से प्राप्त नहीं किया जा सकता। इसके लिए अपना मन देना पड़ता है :

कंचन सिउ पाईऐ नही तोलि ॥
मनु दे रामु लीआ है मोलि ॥ (पन्ना ३२७)

प्रभु से प्रेम करने वाला प्रभु का भक्त जीवन भर नाम-रत्न का व्यापार करता रहता है। प्रत्येक स्थान पर वो परमात्मा को ही देखता है :

घट परचै जउ उपजै भाउ ॥
पूरि रहिआ तह त्रिभवण राउ ॥ (पन्ना ३४२)

उच्च आत्मिक अवस्था : मन की ही एक विशेष उच्च अवस्था को प्रभु-मिलाप वाली अवस्था कहा जा सकता है। जब जीव गुरु के उपदेशों के

Final

अनुसार जीवन को ढालता है, प्रभु का गुण-कीर्तन करता है, गुरबाणी को विचार कर पढ़ता है, सुनता है, तब उसका शरीर, मन तथा आचरण पवित्र हो जाता है। हृदय में प्रभु-प्रेम पैदा होता है तथा हृदय रूपी सेज पर प्रभु प्रकट होता है :

- दिल महि खोजि दिलै दिलि खोजहु एही ठउर मुकामा ॥ (पन्ना १३४९)
- गाउ गाउ री दुलहनी मंगलचारा ॥
मेरे ग्रिह आए राजा राम भतारा ॥ (पन्ना ४८२)

ऐसा जीव सदा आत्मिक स्थिरता में रहता है। हर्ष-शोक चित्त को स्पर्श नहीं करते। मोह दूर हो जाता है। चिंता, तनाव जिंदगी में से निकल जाते हैं। जो कुछ हो रहा है प्रभु की रज़ा लगती है :

जो किछु होआ सु तेरा भाणा ॥
जो इव बूझै सु सहजि समाणा ॥ (पन्ना १३४९)

ऐसा मनुष्य दुनिया की दृष्टि में गूंगा, बावरा, बहरा तथा पंगु हो जाता है। वह संसार के मोह में लिप्त नहीं होता। झूठ, निंदा, खुशामद से परहेज करता है। पैरों से गलत राह पर नहीं चलता। भक्त कबीर जी इस अवस्था को इस प्रकार बयान करते हैं :

कबीर गूंगा हूआ बावरा बहरा हूआ कान ॥
पावहु ते पिंगुल भइआ मारिआ सतिगुर बान ॥
(पन्ना १३७४)

नाम-सिमरन करते-करते सहज अवस्था पैदा हो जाती है। भक्त कबीर जी के अनुसार सहज अवस्था मानों एक कलायण है जो नाम का नशा देती है। इस मद से विमुक्त होने का मन नहीं करता तथा नाम में ही चित्त लगा रहता है। इस तरह आनंद की अवस्था में मेरे अंदर प्रकाश ही प्रकाश हो गया :

गगनि रसाल चुऐ मेरी भाठी ॥
संचि महा रसु तनु भइआ काठी ॥१॥
उआ कउ कहीऐ सहज मतवारा ॥
पीवत राम रसु गिआन बीचारा ॥१॥ रहाउ ॥
सहज कलालनि जउ मिलि आई ॥
आनंदि माते अनदिनु जाई ॥२॥
चीनत चीतु निरंजन लाइआ ॥
कहु कबीर तौ अनभउ पाइआ ॥ (पन्ना ३२८)

भक्त कबीर जी समझाते हैं कि परमात्मा को इन आंखों से किसी ने नहीं देखा। उसकी तो आत्मिक झलक नज़र आती है। यह अवस्था तब प्राप्त होती है जब जीव सांसारिक भय से मुक्त हो जाता है :

अनभउ किनै न देखिआ बैरागीअड़े ॥
बिनु भै अनभउ होइ वणाहंबै ॥१॥
सहु हदूरि देखै तां भउ पवै बैरागीअड़े ॥
(पन्ना ११०४)

इस अवस्था में मिलने वाले आनंद का मुकाबला किसी सुख से नहीं किया जा सकता :

सहज की अकथ कथा है निरारी ॥
तुलि नही चढै जाइ न मुकाती हलुकी लगै न भारी ॥ (पन्ना ३३३)

संक्षेप में कह सकते हैं कि भक्त कबीर जी की बाणी में नैतिक मूल्यों का प्रतिपादन कर प्रेम तथा सद्भावना का संदेश देते हुए सामाजिक जीवन की समस्यायों का समाधान किया गया है। संसार की नि:सारता के बारे में सजग करते हुए *"जउ पै रसना रामु न कहिबो ॥ उपजत बिनसत रोवत रहिबो ॥"* का उपदेश दिया गया है तथा दृढ़ करवाया है कि परमात्मा के प्रति प्रेम तथा नाम-सिमरन के बिना जप, तप, व्रत आदि निरर्थक हो जाते हैं :

किआ जपु किआ तपु संजमो
किआ बरतु किआ इसनानु ॥
जब लगु जुगति न जानीऐ भाउ भगति भगवान ॥
(पन्ना ३३७)

Final

युगपुरुष भक्त कबीर जी

*-डॉ. मनजीत कौर**

प्रत्येक युग की मान्यताएं एवं साहित्य अपनी पूर्ववर्ती और परवर्ती मान्यताओं तथा साहित्य की दृष्टि से पृथक (भिन्न) होता है। इस दृष्टि से अगर संत साहित्य पर विचार किया जाए तो यह जनजीवन को सर्वाधिक प्रभावित एवं आंदोलित करने वाला, हृदय, बुद्धि तथा आत्मा को एक साथ तरंगित एवं रसान्वित करने वाला अनुपम साहित्य है। यही भक्ति काव्य है जो मनीषियों द्वारा 'स्वर्ण युग' नाम से अभिहित है। साथ ही अपने नाम की सार्थकता एवं गुणवत्ता आधुनिक वैज्ञानिक प्रगतिशील युग में भी स्पष्ट सिद्ध कर रहा है।

भक्त कबीर जी मध्ययुगीन संतों में विशिष्ट स्थान रखते हैं। वे सफल साधक, प्रभावशाली उपदेशक, युगद्रष्टा एवं युगसृष्टा थे।

चिन्तकों के चिन्तनानुसार समूची मानवता जब सचेत अथवा अचेत रूप में किसी परिवर्तन का हृदय की गहराइयों से अनुभव करने लगे और विकट परिस्थितियों में समाधान की अभिलाषा रखे तभी यह जिजीविषा ऐसे युगपुरुषों को जन्म देती है। हमारे देश ने अपने हजारों वर्षों के दीर्घ जीवन-काल में उत्थान-पतन के चक्र को घूमते अनेक बार देखा है और हर संकट की विकट परिस्थितियों में ऐसे युगपुरुष, क्रांतिकारी, संत-भक्त, रहबरी पुरुषों को जन्म दिया है। इस संदर्भ में भक्त कबीर जी असंदिग्ध रूप से ऐसे ही युगपुरुष थे।

भक्त कबीर जी के समय के विषय में प्रमुख रूप से अंत:साक्ष्य का निम्नलिखित प्रमाण प्रस्तुत किया जाता है :

गुर परसादी जयदेव नामा।
भगति कै प्रेम इनही है जाना।
(कबीर ग्रंथावली, पृष्ठ २५१)

प्रस्तुत पद भक्त कबीर जी को भक्त जैदेव जी तथा भक्त नामदेव जी का परवर्ती निश्चित करता है। भगत जैदेव जी का समय बारहवीं शताब्दी तथा भक्त नामदेव जी का समय तेरहवीं शताब्दी का अंतिम चरण माना जाता है। डॉ. रामजी लाल 'सहायक' ने अनेक प्रमाण देकर यह निष्कर्ष निकाला है कि भक्त कबीर जी का समय चौदहवीं शताब्दी के आरंभ से पूर्व नहीं था तथा पंद्रहवीं शताब्दी के अंतिम चरण के पूर्व था। डॉ. रामकुमार वर्मा ने ऐतिहासिक एवं साहित्यिक प्रमाणों का विस्तृत विश्लेषण करने के पश्चात् भक्त कबीर जी का जन्म संवत् १४५५ तथा देहावसान संवत् १५५१ के लगभग माना है। 'कबीर चरित्र बोध' में प्राप्त दोहे के आधार पर भक्त कबीर जी का जन्म १४५५ बिक्रमी ज्येष्ठ सुदी पूर्णिमा, सोमवार को प्रमाणित माना जा सकता है :

चौदह सौ पचपन साल गए, चंद्रवार एक ठाठ ठए।
जेठ सुदी बरसायत को, पूरनमासी तिथि प्रकट भए।
घन गरजें दामिनि दमके बूँदे बरषे झर लाग गए।
लहर तालाब में कमल खिले,
तँह कबीर भानु प्रगट भए।

माना जाता है कि भक्त कबीर जी एक विधवा ब्राह्मण स्त्री के गर्भ से उत्पन्न हुए। उनका पालन-पोषण नीरू और नीमा मुस्लिम दंपत्ति द्वारा किया माना जाता है।

गुरु को ईश्वर से भी बड़ा मानने वाले भक्त कबीर जी के गुरु भक्त रामानंद जी थे।

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, फोन : ९९२९७-६२५२३*

Final

उन्हीं से प्रभु-नाम का मंत्र पाकर भक्त कबीर जी प्रेमाभक्ति में दीक्षित हुए और इसी के फलस्वरूप उन्होंने ईश्वर को पाया।

कई आलोचकों ने भक्त कबीर जी को 'अनपढ़' माना है। शायद उन्होंने भक्त कबीर जी की दो प्रमुख उक्तियों को आधार स्वरूप मान कर अपने तर्क की पुष्टि की है :

१. मसि कागद छुया नहीं, कलम गही नहीं हाथ।

२. विद्या न पढ़ू वाद नहीं जानू।

इस संदर्भ में डॉ. त्रिगुणायत के चिंतनानुसार, "वस्तुत: भक्त कबीर जी का जीवन-अध्ययन बड़ा गहरा था। फिर सतसंगति से भी उन्हें अपने ज्ञान का बहुत बड़ा अंश प्राप्त हुआ था। अंतर्ज्ञान की तो उनमें किसी प्रकार से कमी ही न थी। इन्हीं सब कारणों से भक्त कबीर जी युग के महान उपदेशक एवं दार्शनिक बन गए।"

भक्त कबीर जी पुस्तकीय ज्ञान को बिना भाव के भार-स्वरूप मानते थे। उनका अनुभूति ज्ञान आलौकिक था, जिससे वे महान बन गए। सत्य के अन्वेषी भक्त कबीर जी ने समकालीन समस्त क्षेत्रों में क्रांति की धारा प्रवाहित की। इससे प्रभावित हुए लोग भक्त कबीर जी को महान क्रांतिकारी एवं समाज-सुधारक कहने लगे। दिग्भ्रमित लोगों को भक्त कबीर जी ने *"पेड़ छाडि सब डाली लागे"* कहकर उन्हें सत्य-पथ पर अग्रसर किया। सामाजिक व धार्मिक कुरीतियों का उन्मूलन करने वाले भक्त कबीर जी की मस्ती एवं उनके फक्कड़ाना अंदाज में भी तेज स्पष्ट लक्षित होता है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के कथनानुसार, "भक्त कबीर जी ने कभी अपने ज्ञान को, अपने गुरु को और अपनी साधना को संदेह की नजरों से नहीं देखा। उनकी अखंड आत्मनिष्ठा में एक क्षण के लिए भी दुर्बलता दिखाई नहीं देती। वे वीर साधक थे और वीरता अखंड आत्मविश्वास के आश्रय के कारण ही पनपती है। भक्त कबीर जी के लिए साधना विकट संग्राम-स्थली थी, जहां कोई विरला शूर ही टिक सकता था।"

डॉ. सरनाम सिंघ शर्मा के शब्दों में "भक्त कबीर जी निष्काम कर्मयोग के प्रचेता पुरुष थे। वे अपने युग के जननेता थे। उनका जीवन तत्कालीन युग के लिए आदर्श दर्पण था। वे अपनी साधना के धनी, विश्वासों के राजा और अनुभूतियों के साहूकार थे। वे कभी झिझके नहीं, कभी झुके नहीं, कभी अटके नहीं, कभी भटके नहीं।"

भक्त कबीर जी सत्य के जिज्ञासु थे तथा सत्य को पाने का अदम्य साहस उनमें कूट-कूट कर भरा था। डॉ. दीवान सिंघ अपने एक आलेख 'गुरु ग्रंथ साहिब में भक्त कबीर जी की बाणी' में लिखते हैं-- "भक्त कबीर जी की बाणी का मूल उद्देश्य वही है जो गुरमति का है। सभी भक्तों का यही उपदेश है जिसको वे अलग-अलग ढंग से प्रकट करते हैं, जैसे वहमों-भ्रमों को छोड़कर परमात्मा का नाम जपना, हर समय उसको याद रखना, उसको दिल से प्रेम करना, उसको मन में बसाना, दूसरा भाव दिल से निकाल कर, आपसी भेदभाव मिटाकर सभी मनुष्यों को परमात्मा का अंश ख्याल रखना, ऊँच-नीच, अच्छे-बुरे का भेद मिटाना, हर समय भक्ति-भाव में मग्न रहना, दुनिया के लालच और भोग, विषय-विकार त्याग कर अपने आप को गुरु-कृपा, सतसंग का आसरा लेकर प्रभु के साथ जोड़ना। यह सत्य-मार्ग सभी भक्तों का मार्ग है। भक्त कबीर जी का मनुष्य-मात्र को यही उपदेश है।"

विविध चिंतकों ने भक्त कबीर जी को मानवता का पर्याय माना है। इस दृष्टि से विचार करें तो उनका सम्पूर्ण चिंतन मानव-

Final

सापेक्ष है। भक्त कबीर जी समन्वयवादी समदर्शी थे। भक्त कबीर जी की आदर्श भावनाओं एवं मानवतावादी दृष्टिकोण से ही मानव-मूल्यों की तलाश करते हुए डॉ. हौसिला प्रसाद सिंह का कथन है कि "भक्त कबीर जी की बाणी मानव-समाज और मानव-जीवन से जुड़ी है। उनकी दृष्टि में विश्व-मानव को विकासशील स्थिति तक पहुंचाने वाले तत्वों को ही 'मानव-मूल्य' कहते हैं। उनके विचारानुसार मध्यकालीन भक्ति-आंदोलन जन-आंदोलन ही नहीं, सामाजिक आर्थिक और सांस्कृतिक आंदोलन भी था, जिसकी अगुआई भक्त कबीर जी ने की थी। भक्ति को उन्होंने मानव-मूल्य के रूप में प्रस्तुत किया है। इस भक्ति में धीरे-धीरे कई मूल्य विकसित हुए। भक्त कबीर जी की दृष्टि में प्रेम ही वह मानव-मूल्य है जिससे समाज में समानता आती है और भेदभाव नष्ट हो जाते हैं।

भक्त कबीर जी भक्ति-काल की संत काव्य परंपरा के प्रतिनिधि संत थे। भक्त कबीर जी की भाषा की यह बहुत बड़ी विशेषता है कि उनका कथ्य स्पष्ट तथा चिंतन मौलिक है। भाषा पर उनका पूरा अधिकार था। वे जो भाव, विचार जिस तरह से व्यक्त करना चाहते थे, उसी प्रकार से व्यक्त कर लेते थे। उनके भाव सीधे हृदय से निकलते थे और श्रोता के मन पर सीधे असर करते थे।

समाज में उनकी भूमिका समाज-सुधारक की थी, जो समाज के लिए आवश्यक विधान बना सके न कि बने-बनाए अंधविश्वासों का अनुकरण करता रहे। भक्त कबीर जी ऐसे युगपुरुष थे, जिन्होंने कई दृष्टियों से युग-परिवर्तन कर मानवता का मार्गदर्शन किया। मध्यकालीन युग राजनीतिक दृष्टि से अव्यवस्थित, सामाजिक दृष्टि से विषाक्त, धार्मिक दृष्टि से अस्थिरता वाला तथा साहित्यक दृष्टि से संघर्ष का युग था। विकट परिस्थितियों में जब अंधविश्वासों, अत्याचारों एवं धार्मिक संकीर्णता के कारण समाज तथा धर्म अपनी मूल संस्कृति को विस्मृत् कर निरंतर ह्रास होता जा रहा था, ऐसे नाजुक दौर में भक्त कबीर जी का आविर्भाव हुआ, जिन्होंने समाज को देखा, यथार्थ को भोगा तथा समकालीन विषम परिस्थितियों के विकट जाल में फंसी मानवता के लिए मानव-प्रेम को ही ईश्वर-प्रेम का पर्याय बता कर मानव-मात्र के निमित मंगलमयी स्वरूप की प्रतिष्ठा की। आओ! कतिपय उदाहरणों से भक्त कबीर जी की बाणी द्वारा हुए युग-परिवर्तन का संक्षिप्त विशलेषण करें :--

धार्मिक क्षेत्र में युग-परिवर्तन : उस समय की परिस्थितियों के अनुसार अधिक अंधकार तो धर्म के क्षेत्र में व्याप्त था। धर्म के ठेकेदार स्वंय को ही भगवान समझने लगे थे, जो अक्सर साधारण लोगों को गुमराह कर अपना उल्लू सीधा कर रहे थे। भक्त कबीर जी ने निर्गुण प्रभु की उपासना की।

भक्त कबीर जी ने गहरे विश्वास एवं आस्था से प्रभु रूपी पति से जीव रूपी स्त्री के विवाह का सजीव चित्रण किया है-- हे सुहागिन स्त्रियो! तुम बार-बार मंगल गीतों का गायन करो, क्योंकि मेरे हृदय रूपी घर में संसार का स्वामी परमात्मा आ पहुंचा है। नाभि-कमल में चलने वाले श्वास-प्रश्वास को मैंने विवाह की वेदी बनाया है और ब्रह्म-ज्ञान रूपी मंत्रों का उच्चारण किया है। मेरा सौभाग्य है कि मैंने परमात्मा जैसा पति पा लिया है। सुर, नर, मुनि रूपी मेरे करोड़ों सतसंगी इस आश्चर्यजनक विवाह को देखने आए हैं। भक्त कबीर जी कथन करते हैं कि परमात्मा-पति मुझे विवाह कर ले चला है :

गाउ गाउ री दुलहनी मंगलचारा ॥
मेरे ग्रिह आए राजा राम भतारा ॥१॥ रहाउ ॥
नाभि कमल महि बेदी रचि ले

Final

ब्रहम गिआन उचारा ॥
राम राइ सो दूलहु पाइओ अस बडभाग हमारा ॥२॥
सुरि नर मुनि जन कउतक आए
कोटि तेतीस उजानां ॥
कहि कबीर मोहि बिआहि चले है
पुरख एक भगवाना ॥ *(पन्ना ४८२)*

ईश्वर की उपासना, प्राप्ति हेतु भक्त कबीर जी ने सतिगुरु की महत्ता और महिमा का गुणगान किया है। अवतारवाद, मूर्ति-पूजा का खंडन करते हुए ईश्वर की आराधना पर बल दिया है :

किआ जपु किआ तपु किआ ब्रत पूजा ॥
जा कै रिदै भाउ है दूजा ॥१॥
रे जन मनु माधउ सिउ लाईऐ ॥
चतुराई न चतुरभुजु पाईऐ ॥ . . .
कहु कबीर भगति करि पाइआ ॥
भोले भाइ मिले रघुराइआ ॥ *(पन्ना ३२४)*

मानवतावाद एवं समन्वय-भाव की पुष्टि करता हुआ भक्त कबीर जी का पावन शबद इस संदर्भ में कितना सटीक है :

- अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ
कउन भले को मंदे ॥ *(पन्ना १३४९)*
- अलहु अलखु न जाई लखिआ
गुरि गुडु दीना मीठा ॥
कहि कबीर मेरी संका नासी सरब निरंजनु डीठा ॥
(पन्ना १३५०)

भक्त कबीर जी ने वाह्याडंबरों, कर्मकांडों को त्याग कर निर्गुण निराकार की आरती प्रभु-नाम की ज्योति जलाकर उतारी है, जिसमें अनहद धुन बज उठती है :

जोति लाइ जगदीस जगाइआ बूझै बूझनहारा ॥
पंचे सबद अनाहद बाजे संगे सारिंगपानी ॥
कबीर दास तेरी आरती कीनी निरंकार निरबानी ॥
(पन्ना १३५०)

भक्त कबीर जी ने धर्म के असली मायने समझाए। माया में गलतान हुए लोगों को समझाया कि यह शरीर तो नश्वर है :

अंधकार सुखि कबहि न सोई है ॥
राजा रंकु दोऊ मिलि रोई है ॥ . . .
जस देखीऐ तरवर की छाइआ ॥
प्रान गए कहु का की माइआ ॥ *(पन्ना ३२५)*

मुसलिम धर्म वालों को रोज़ा रखने का असली मर्म समझाते हुए कहा कि हे मनुष्य! तू रोज़ा रखता है, अल्लाह को प्रसन्न करना चाहता है, मगर स्वाद के पीछे जीव-हत्या करते हुए तुझे तनिक भी संकोच नहीं होता :

रोजा धरै मनावै अलहु सुआदति जीअ संघारै ॥
आपा देखि अवर नही देखै काहे कउ झख मारै ॥
(पन्ना ४८३)

इसी प्रकार भक्त कबीर जी सन्यासियों की पोल खोलते हैं और समझाते हैं कि अगर नग्न फिरने से योग होता तो जंगल के पशु तो कब से मुक्ति पा चुके होते :

नगन फिरत जौ पाईऐ जोगु ॥
बन का मिरगु मुकति सभु होगु ॥ (पन्ना ३२४)

बाहरी आचरण से मुक्त होने की शिक्षा देने वाले बनारस के पंडितों को भी भक्त कबीर जी आड़े हाथों लेते हैं जो लोगों को स्वार्थवश सही मार्ग से विचलित करने में लगे हैं। ऐसे तथाकथित संतों को ठग कहकर खरी-खरी सुनाते हुए कथन करते हैं :

गज साढे तै तै धोतीआ तिहरे पाइनि तग ॥
गली जिन्हा जपमालीआ लोटे हथि निबग ॥
ओइ हरि के संत न आखीअहि बानारसि के ठग ॥
(पन्ना ४७६)

युग-प्रवर्तक भक्त कबीर जी ने धार्मिक आडंबरों का खंडन करते हुए बहुत बड़ा उदाहरण प्रस्तुत किया है। हिंदू धर्म से संबंधित लोग काशी जैसे धार्मिक स्थल पर आखिरी समय का जीवन व्यतीत करने इस उद्देश्य से चले जाते हैं कि वहां प्राण त्यागने से मुक्ति

Final

मिलती है। लोगों को इस भ्रम से निकालने के लिए भक्त कबीर जी जीवन के अंतिम समय में काशी को छोड़ कर मगहर चले गए :

कहतु कबीरु सुनहु रे लोई भरमि न भूलहु कोई ॥
किआ कासी किआ ऊखरु मगहरु रामु रिदै जउ होई ॥ *(पन्ना ६९२)*

सामाजिक क्षेत्र में युग-परिवर्तन : समस्त जीवों में ईश्वर का नूर देखने वाले भक्त कबीर जी ने ऊंच-नीच, राजा-रंक, अमीर-गरीब, छोटा-बड़ा अथवा जातिगत भेदभाव की दीवार को तोड़ने हेतु समझाया कि वास्तव में बड़ा वह है जो ईश्वर की भक्ति करता है, क्योंकि उसके दरबार में जीव के कर्मों के अनुसार फैसला होना है :

हृदय की पवित्रता पर बल देते हुए भक्त कबीर जी ने समझाया :

कबीर मनु निरमलु भइआ जैसा गंगा नीरु ॥
पाछै लागो हरि फिरै कहत कबीर कबीर ॥
(पन्ना १३६७)

वास्तव में मुक्ति का द्वार तो राई के दसवें हिस्से जितना है-- बहुत ही संकीर्ण। अहंकारी मन तो मदमस्त हाथी की तरह है। ऐसे में उसमें से पार जाना मुमकिन नहीं होगा। भक्त कबीर जी समझाते हैं :

कबीर मुकति दुआरा संकुऐं राई दसवें भाइ ॥
मनु तउ मैगलु होइ रहिओ निकसो किउ कै जाइ ॥
(पन्ना १३६७)

श्रद्धाविहीन भक्ति तथा दिखावे के कर्मकांडों से परमात्मा हरगिज खुश होने वाला नहीं। परमात्मा को अपने हृदय-घर में देखने की प्रेरणा करते हुए भक्त कबीर जी कथन करते हैं :

कबीर मुलां मुनारे किआ चढहि
सांई न बहरा होइ ॥
जा कारनि तूं बांग देहि दिल ही भीतरि जोइ ॥
(पन्ना १३७४)

भक्त कबीर जी हर प्रकार का अहंकार त्याग कर ईश्वर की सच्ची उपासना करने पर बल देते हैं :

कबीर गरबु न कीजीऐ चाम लपेटे हाड ॥
हैवर ऊपरि छत्र तर ते फुनि धरनी गाड ॥
(पन्ना १३६६)

भक्त कबीर जी ने सिमरन पर जोर दिया। बेशकीमती जीवन पाकर अगर फिर भी मुक्तावस्था न प्राप्त हुई तो पछतावा ही शेष रह जायेगा :

कबीर लूटना है त लूटि लै राम नाम है लूटि ॥
फिरि पाछै पछुताहुगे प्रान जाहिंगे छूटि ॥
(पन्ना १३६६)

भक्त कबीर जी के चिंतनानुसार वही कुल भली है जिस कुल में हरि-नाम जपने वाले लोग पैदा होते हैं :

कबीर सोई कुल भली जा कुल हरि को दासु ॥
जिह कुल दासु न ऊपजै सो कुल ढाकु पलासु ॥
(पन्ना १३७०)

निर्गुण प्रभु के उपासक भक्त कबीर जी ने सहज साधना पर बल देते हुए विविध साधनाओं में भ्रमित लोगों को ज्ञान, योग, भक्ति एवं कर्म की सत्य परिभाषा से अवगत् कराया। उन्होंने आदर्श समाज की कल्पना को साकार किया। उन्होंने सामाजिक वैषम्य, रूढ़ियों, आडंबरों के विरुद्ध बिगुल बजाया। उनके दार्शनिक चिंतन से जुड़े सामाजिक कर्म के कारण उनकी बाणी में मध्यकालीन सामंती समाज के प्रति आक्रोश है। इतनी ऊंची अवस्था के अधिकारी, निरीह भक्त, महान समाज-सुधारक, दिव्य गुणी होते हुए भी स्वयं को अहं-भाव से दूर रखना उनकी साधना की पराकाष्ठा है।

Final

पीर बुद्धू शाह

*-डॉ. रूप सिंघ**

सुप्रसिद्ध सूफी फकीरों की तरह शरअ-शरीअत और मज़हबी विभाजन से ऊपर उठ चुकी महान शख्सियत पीर बुद्धू शाह का जन्म १३ जून, १६४७ ई को साढौरा गांव (वर्तमान जिला यमुनानगर, हरियाणा) में सैयद गुलाम शाह के घर हुआ। सैयद परिवार को मुगल राज्य के दरबार में आदरणीय स्थान हासिल था और उन्हें जीवन-निर्वाह के लिए एक बड़ी जागीर भी मिली थी। पीर बुद्धू शाह का पहला नाम बदर-उद-दीन था। बचपन से ही इनका झुकाव दुनियादारी की ओर न होकर खुदा की बंदगी की तरफ था। अल्लाह से मिलने की तीव्र इच्छा के कारण ये गंभीर स्वभाव वाले और कम बोलने के आदी थे। समाज से विलक्षण रहन-सहन के कारण लोगों ने इन्हें 'बुद्धू' कहना शुरू कर दिया। उम्र में बड़े हुए तो शाही घराने से संबंध होने के कारण इन्हें 'बुद्धू शाह' नाम से याद किया जाने लगा। उम्र के पथ पर चलते हुए पीर बुद्धू शाह आध्यात्मिकता की मंजिलें तय करते चले गए। एक समय ऐसा भी आया जब इनकी सिक्खी-सेवकी में इस कद्र बढ़ावा हुआ कि इनको 'पीर' की उपाधि प्राप्त हुई। पीर बुद्धू शाह अपने समय के सुप्रसिद्ध सूफी, फकीर सैयद भीखन शाह के सेवक थे। सैयद भीखन शाह ने दशमेश पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के पटना साहिब पहुंच दर्शन किए और मन की शंकाओं को दूर किया। पीर भीखन शाह ने ही पीर बुद्धू शाह का मिलाप श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी से लखनौर में करवाया था। पीर जी गुरु जी के दर्शन कर बहुत प्रभावित हुए। पीर बुद्धू शाह हर समय धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन और परमात्मा के लोगों की संगत करने की चेष्टा रखते थे।

पीर बुद्धू शाह का विवाह १७ वर्ष की आयु में १६६४ ई में सैद खान की बहन नसीरां के साथ हुआ। सैद खान औरंगजेब बादशाह के दरबार में प्रसिद्ध जरनैल था। पीर बुद्धू शाह के घर चार सुपुत्र पैदा हुए, जिनमें से समय पाकर तीन ने गुरु-घर के लिए शहादत दी।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहादत के पश्चात् श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने कुछ समय पाउंटा साहिब निवास किया। यहीं पर पीर बुद्धू शाह ने गुरु जी के दूसरी बार दर्शन कर अपनी मानसिक शंकाओं का निवारण किया।

पीर बुद्धू शाह ने गुरु जी से विनती की कि "मेरी प्यास बुझाओ।" गुरु जी ने फरमान किया, "भटकने की जरूरत नहीं, रुक जाओ।"

पीर जी ने गुरु जी से पूछा, "खुदा को मिलने में क्या रुकावटें हैं?

गुरु जी ने कहा, "खुदा के दीदार में अज्ञानता और संकीर्णता ही प्रमुख रुकावटें हैं?

पीर बुद्धू शाह ने गुरु जी को आध्यात्मिक अगुआ स्वीकार कर लिया। पीर जी गुरु-संगत से इतने प्रभावित हुए कि वे हमेशा के लिए गुरु जी के पास रहना चाहते थे, परंतु मुरीदों की इच्छा हेतु गुरु जी से आज्ञा प्राप्त कर साढौरा

मुख्य सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर-१४३००६, **Sikhscholer@gmail.com*

Final

वापिस लौट आए।

साढौरा पहुंचने के कुछ समय पश्चात् औरंगजेब की ओर से निष्कासित किए पठान रोज़ी-रोटी की तलाश में पीर बुद्धू शाह की शरण में आ गए। पीर बुद्धू शाह ने अपने विश्वास पर इन पठानों को गुरु जी के पास नौकरी दिलवा दी। भंगाणी के युद्ध के समय ये पठान भगौड़े हो गए। जब पीर बुद्धू शाह को पठानों की इस घिनौनी कार्यवाही का पता चला तो उन्हें भारी सदमा पहुंचा। पीर जी ने दगेबाजों द्वारा लगाए दाग को धोने के लिए अपने परिवार के सदस्यों और मुरीदों सहित गुरु जी की तरफ से लड़ने का फैसला किया। इस नाजुक समय में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को फौजी मदद मिलनी बहुत फायदेमंद साबित हुई। पीर जी के सुपुत्रों और मुरीदों ने रणभूमि में रक्त-रंजित लड़ाई लड़ी। इस लड़ाई में पीर जी के दो सुपुत्र और अनेक प्यारे मुरीद शहीद हो गए।

युद्ध में कुर्बान हुए अपने सुपुत्रों और मुरीदों कपीर जी के मन में जरा भी अफसोस न था, बल्कि वे खुश थे कि वे इस पवित्र खून से दगाबाजों द्वारा लगाए दाग को धोने में सफल हुए हैं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि पीर बुद्धू शाह ने विश्वास और वफादारी की अनोखी मिसाल कायम करते हुए, उचित समय पर अपने आध्यात्मिक अगुआ की मदद कर युद्ध का रुख ही बदल दिया।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने पीर बुद्धू शाह की वफादारी एवं कुर्बानी की भरे दरबार में खुलकर प्रशंसा की और पीर जी के मुरीदों को बख्शिशें देकर सम्मानित किया। गुरु जी गुरु-घर के अटूट विश्वासी और निष्काम सेवक पीर बुद्धू शाह को भी बहुमूल्य वस्तुएं देकर मालामाल करना चाहते थे, परन्तु पीर जी ने कीमती वस्तुएं लेने से इनकार करते हुए गुरु-बख्शिश के रूप में केश सहित कंघा लेने की मांग की। गुरु जी उस समय केशों में कंघा कर रहे थे। गुरु जी ने पीर जी को कोशों सहित कंघा और छोटी दसतार बख्शिश के रूप में भेंट की, जो आज भी संगत के दर्शन के लिए सुरक्षित है।

पीर बुद्धू शाह बख्शिश प्राप्त कर साढौरा वापिस आ गए। मैदान-ए-जंग में हार जाने के पश्चात् पहाड़ी राजाओं ने बादशाह औरंगजेब के पास अपनी हार का मुख्य कारण पीर बुद्धू शाह का गुरु जी की तरफ से लड़ना बताया। पहाड़ी राजा पीर जी को सख्त से सख्त सज़ा दिलाना चाहते थे, परन्तु सैद खान के राजय दरबार में प्रमुख अधिकारी होने के कारण पीर जी बादशाही कहर से बच गये।

पीर जी अल्लाह की इबादत में हर पल गुजार कर जीवन व्यतीत कर रहे थे। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी कई बार पीर जी से मिलने के लिए साढौरा गये। जिस समय औरंगजेब ने सैद खान को गुरु जी की बढ़ती शक्ति को कुचलने के लिए भेजा था, उस समय भी पीर जी ने सैद खान को ऐसा करने से रोका था। सैद खान की बहन नसीरां ने भी उसे गुरु-फौज पर हमला न करने के लिए कहा, मगर सैद खान नहीं माना। जिस समय सैद खान मैदान-ए-जंग में गुरु जी के सम्मुख हुआ, तब उसे पीर बुद्धू शाह और नसीरां बहन की नसीहत याद आ गई। सैद खान गुरु जी के प्रताप के दर्शन कर पुकार उठा :

खुदा आइद खुदा आइद।
मैं आइद खुदा बंदा।
हकीकत दर मिज़ाज़ आइद।
कि मुरदा रा कुनद जिंदा ॥

सैद खान गुरु जी के प्रताप के आगे टिक

Final

न सका और आत्मसमर्पण कर हमेशा के लिए गुरु जी की शरण में आ गया। जब बादशाह औरंगजेब को इस बात का पता चला तो उसने उसमान खान को गुरु जी को किसी भी हालत में पेश करने का हुक्म दिया। उसमान खान साढौरा का अहलकार था। इत्तफाक से उस समय गुरु जी पीर बुद्धू शाह से मिलने के लिए साढौरा आये हुए थे। जब पीर बुद्धू शाह से उसमान खान ने गुरु जी को सौंपने की मांग की तो पीर जी ने साफ इनकार कर दिया। पीर बुद्धू शाह ने उसमान खान को इस बात पर मना लिया कि वह गुरु जी का खून बादशाह के लिए सबूत के रूप में लेकर जा सकता है। पीर बुद्धू शाह ने इतने समय में गुरु जी को सुरक्षित बाहर भेज दिया। पीर जी ने बादशाह को यकीन दिलाने के लिए अपने बेटे के खून की एक बोतल तैयार की। जब उसमान खान ने खून की बोतल गुरु जी के खून के सबूत के तौर पर दरबार में पेश की तो शाही हकीम ने इसे गुरु जी का खून होने से इनकार कर दिया। उसमान खान बहुत शर्मसार हुआ। उसने पीर बुद्धू शाह के परिवार को मिटाने के लिए साढौरा पर चढ़ाई कर दी।

पीर बुद्धू शाह ने समय की नब्ज को पहचानते हुए अपनी सुपत्नी और पोतों को समाणा भेज दिया और अकेले ही साढौरा रह गये। उसमान खान ने पीर बुद्धू शाह को पकड़ बेरहमी से २१ मार्च, १७०४ ई को टुकड़े-टुकड़े कर शहीद कर दिया। उनके निवास-स्थान को भी मिट्टी में मिला दिया। एक और विचारानुसार पीर जी को उसमान खान ने जिंदा जला दिया था।

इस प्रकार पीर बुद्धू शाह ने गुरु-घर को अपने चार सुपुत्रों, अनेक मुरीदों तथा अपनी कुर्बानी देकर सिक्ख इतिहास में अनोखी मिसाल पैदा कर नये कीर्तिमान स्थापित किए और हमेशा-हमेशा के लिए सिक्खों के हृदय में स्थायी, सुखदायी, सम्मानजनक जगह बनाई।

कविता

प्रभु संग प्रीति

*-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'**

ऐ मानव! माया का मोह तू छोड़ दे!
अपनी प्रीति प्रभु संग जोड़ ले!
माया का साथ तुझको ले डूबेगा।
इसके साथ में प्रभु का साथ छूटेगा।
दृढ़ता से माया के बंधन तोड़ दे!
अपनी प्रीति प्रभु संग जोड़ ले!
नाम वाहिगुरु का सबसे उत्तम धन है।
दुनिया के धन में क्यों रमा मन है?
मायावी धन जमा करने में मत होड़ ले!
अपनी प्रीति प्रभु संग जोड़ ले!
क्यों वासनाओं के पीछे भागता है?
तेरा सोया मन क्यों नहीं जागता है?
अरे, फिर पछताएगा मन को मोड़ ले!
अपनी प्रीति प्रभु संग जोड़ ले!
अगर प्यार प्रभु का पाना है।
अगर उसकी प्यारी नज़र में आना है।
तो दूसरों की भलाई से नाता जोड़ ले!
अपनी प्रीति प्रभु संग जोड़ ले!

**बी-एक्स ९२५, मोहल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४, फोन : +९१९८७२२-५४९९०*

Final

पुरजा पुरजा कटि मरै कबहू न छाडै खेतु ॥

*-बीबी संदीप कौर**

सिक्ख धर्म की अनगिनत शहादतों में बाबा बंदा सिंघ बहादुर की शहादत सबसे विलक्षण और हृदय को पसीज देने वाली मानी जाती है। इसके बारे में सोचते ही आंखों के सामने आ जाता है गुरदासनंगल की गढ़ी से लेकर दिल्ली तक निकाला गया वह जलूस तथा दिल्ली का वो घटनाक्रम जहां सिक्खों को शहीद कर मुगलों ने अपने मन की भड़ास निकाल सिक्ख कौम का सफाया करने का भरपूर प्रयत्न किया, परन्तु वे असफल रहे।

बाबा बंदा सिंघ बहादुर की बढ़ती सफलताओं और प्रसिद्धि ने मुगल साम्राज्य की नाक में दम कर दिया था। १८ फरवरी, १७१२ ई. को बहादुर शाह की मृत्यु हो गई। फरुख्सियर बादशाह बन गया। मुगल सैनिकों को अब्दुस्समद खान और जकरिया खान के नेतृत्व में बाबा बंदा सिंघ बहादुर पर हमला कर उन्हें मारने और फतह हासिल करने का हुक्म दिया गया। एक ओर लाहौर में जंगी तैयारियां हो रही थीं तो दूसरी ओर बाबा बंदा सिंघ बहादुर सलतनत की हर साजिश पर नज़र गाढ़े हुए थे। बाबा जी ने भी युद्ध के लिए मोर्चे खड़े करने आरंभ कर दिये, भले ही उनके पास ज्यादा संख्या में सैनिक न थे।

उन्होंने कोट मिर्जाजान नामक स्थान पर एक कच्चे किले का निर्माण करने का हुक्म दिया। किला अभी पूरा भी नहीं हुआ था कि मुगल सैनिकों ने हमला कर दिया। शाही जरनैल बाबा बंदा सिंघ बहादुर से इतना भयभीत था कि वह अपनी सैनिक टुकड़ी के साथ मौलवियों और काजियों को रखता था। ये मौलवी-काज़ी सैनिकों के साथ चलते हुए कलमा पढ़ते रहते और बादशाह की विजय की कामना करते रहते। सिक्ख फौज का उनके मन में इस कद्र भय था कि वे जोर-जोर से अल्लाह-अल्लाह पुकार कर अपना भय दूर करने का यत्न करते।

बाबा बंदा सिंघ बहादुर ने बड़ी निडरता और जोश से सैनिकों का सामना किया। परिणामस्वरूप मुगल सैनिक घबरा गए। लूट और इनाम के लालच में आई मुगल सेना मैदान छोड़ भागने लगी। शाही जरनैल ने उन्हें बड़ी मुश्किल से रोका। इसी बीच बाबा बंदा सिंघ बहादुर और उनकी सेना ने गुरदासनंगल की गढ़ी में शरण ले ली। यह गढ़ी चारदीवारी में मौजूद दुनी चंद की हवेली थी, जो जिला गुरदासपुर में स्थित है।

बाबा जी ने दीवार को मजबूत कर हवेली के चारों तरफ खाई खुदवा दी। शाही नहर और पास की नदी का बांध तोड़ खाई में पानी भर दिया गया, जिससे कोई बाहर से अंदर प्रवेश न कर सके और घोड़े आदि आसानी से किले तक न पहुंच सकें। मुगल सेना ने गुरदासनंगल की गढ़ी को चारों ओर से घेर लिया। अब्दुस्समद खान २४ हजार की फौज लेकर घेरा डाल बैठ गया। बाबा जी के पास इतनी अधिक मात्रा में न तो सेना थी और न ही रसद। बाहर से जो भी सिंघ आने की कोशिश करता उसे कत्ल कर दिया जाता। किले के बाहर किसी भी चीज का आदान-प्रदान बंद हो गया। गढ़ी के अंदर से सिक्ख

**२६-बी/१, कैनेडी एवेन्यू, एल्बर्ट रोड, श्री अमृतसर-१४३००१*

Final

सेना टुकड़ियों में आकर मुगल सेना पर हमला करती। एक-एक सिंघ बीस-बीस मुगल सैनिकों को मार कर शहादत हासिल करता। मुगल सेना के पास अनगिनत सैनिक, घुड़सवार और तोपखाना था, फिर भी वे तौबा करते हुए बाबा जी द्वारा गढ़ी छोड़कर जाने की दुआ करते। गुरदासनंगल की गढ़ी ऊंचे स्थान पर थी, मुगल सेना के तंबू निचली जगह पर थे। मुगल सेना पर सिक्ख फौज आसानी से तीरों से हमला करती थी।

यह घेरा और लड़ाई आठ महीने तक चली। मुगलों की घेराबंदी के कारण गढ़ी में अनाज आदि सामान जाना बंद हो गया। जो पहले से जमा था वो भी खत्म हो गया। सिक्खों ने पेड़ों के पत्ते, छाल आदि खाकर गुजारा किया। युद्ध का सामान भी खत्म हो गया। जिस मार्ग से होकर सिक्ख सैनिक मुगल सेना पर हमला करते थे, उस पर भी मुगलों का कब्जा हो गया। धीरे-धीरे मुगल सेना अपने तंबू किले के पास ले आई। बाबा जी का डर मुगल जरनैलों और सैनिकों के मन में अब भी कायम था। उन्हें ऐसा प्रतीत होता कि बाबा बंदा सिंघ बहादुर भेस बदल कर आयेंगे और सबका विनाश कर देंगे। किले में से कोई बिल्ली-कुत्ता भी बाहर निकलता तो शाही सेना का गला सूख जाता। वे उन्हीं पर तीरों और गोलियों की वर्षा कर देते। भूख से बेहाल सिक्ख सैनिकों ने कई दिन भूखे-प्यासे ही गुजार दिये। बिना भोजन के लंबा समय जीने का ऐसा दर्दनाक वृत्तांत इतिहास में श्री अनंदपुर साहिब की घटना के बाद केवल यही है।

इतने कष्टों के बाद भी सिक्ख सैनिकों ने हौसला न छोड़ा। एक समय आया जब बारूद और तीर भी खत्म हो गये। सिक्खों के शरीर भूख के मारे पिंजर बन गए। फिर भी *"तेरा कीआ मीठा लागै ॥"* की भावना प्रबल थी। वैरी की हिम्मत न थी कि वह भूखे शेरों को हाथ लगा सके। अब्दुस्समद खान ने कूटनीति का प्रयोग कर बाबा बंदा सिंघ बहादुर को गढ़ी छोड़ने को कहा। उन्हें आश्वासन दिया गया कि बाहर आने पर उन्हें सकुशल जाने दिया जाएगा।

१७ दिसंबर, १७१५ ई को बाबा बंदा सिंघ बहादुर के आदेशानुसार सिंघों ने गढ़ी के द्वार खोल दिये। द्वार खुलते ही अबदुस्समद की सेना ने सिक्खों पर हमला बोल दिया। अधमरी दशा में कई सिंघों ने मुकाबला कर शहीदी प्राप्त की। तीन सौ सिंघों के सिर बादशाह फरुख्सियर को नज़राने के रूप में भेजे गये। अब्दुस्समद ने अपना वादा तोड़ बाबा बंदा सिंघ बहादुर, उनके परिवार और सभी सिक्खों को बंदी बना लिया। यह शाही फौज की बुजदिली और कायरता का प्रमाण था। सिंघों के शव वृक्षों के साथ लटका दिये गये। चारों ओर खून ही खून था। सिंघों में शहादत प्राप्त करने का जोश चरम सीमा पर था।

बाबा बंदा सिंघ बहादुर और बाकी बचे सिंघों को गुरदासनंगल से लेकर दिल्ली तक जलूस की शक्ल में ले जाया गया। बाबा बंदा सिंघ बहादुर को फटी हुई शाही पोशाक पहना, जंजीरों में जकड़ हाथी पर रखे पिंजरे में बिठाया गया। शाही पोशाक के माध्यम से आम जनता के सामने बाबा जी का खूब मजाक उड़ाया गया। जंजीर का एक सिरा मुगल जल्लाद को पकड़ा दिया गया कि अगर बाबा बंदा सिंघ बहादुर भागने का प्रयत्न करें तो उनके पेट में खंजर मार उन्हें घायल कर दिया जाए। पिंजरे के चारों ओर हजारों सिंघों के कटे सिर रखे गये, ताकि मुगल सेना के आतंक का प्रभाव लोगों के मन पर डाला जा सके। बाबा जी के आगे कई सिंघों को जंजीरों से बांधकर ले जाया जा रहा था। उन पर कोड़े बरसाये जाते, मगर वे उफ न करते। केवल वाहिगुरु-वाहिगुरु का स्वर ही सुनाई देता। जो भी सिंघ रास्ते में मिलता उसे भी इस जलूस में शामिल कर लिया जाता। मुगल

Final

सेना अपनी विजय का जश्न मना रही थी। अब्दुस्समद खान और जकरिया खान ने अपने हाथी सबसे आगे लगा रखे थे। बाबा बंदा सिंघ बहादुर और उनकी सेना के सिंघों के चेहरे पर किसी प्रकार की कोई घबराहट या माथे पर शिकन न थी। वे तो मन ही मन इस अवस्था में भी गुरबाणी का पाठ कर रहे थे। अपने गुरु और धर्म पर पूर्ण विश्वास और आस्था ही थी कि वे इतना कष्ट सहते हुए भी चढ़दी कला में थे।

दिल्ली पहुंचने पर सबको शहीद किए जाने का वक्त आ गया। सिंघों में से किसी ने भी अपनी जान बचाने के लिए कोई प्रलोभन स्वीकार न किया। रोज़ १००-१०० की संख्या में सिंघ शहीद किए जाते। हर सिंघ दूसरे से पहले शहीद होने की इच्छा जाहिर करता। शहीद करने से पहले हर एक सिंघ को इसलाम धर्म कबूल करने को कहा जाता, बहुत-से लालच दिये जाते, मगर वे धर्म के सिद्धांतों से जरा भी न डगमगाते। जिसकी बारी आती, उसके मुख पर अलग ही नूर दिखाई देता। सब दुनियादारी लोभ-लालच छोड़ वे शहादत का रास्ता चुनते। बाबा बंदा सिंघ बहादुर के साथी योद्धा भी बड़ी हिम्मत के साथ मुगलों की हर बात को नकारते हुए शहीद हुए।

अब बारी आई बाबा बंदा सिंघ बहादुर की। बाबा जी को कई लालच दिये गए। उन्हें भी इसलाम धर्म कबूल करने को कहा गया, परन्तु उन्होंने 'न' में करारा जवाब दिया। बादशाह हैरान था कि यह किस मिट्टी का बना है जो डरता ही नहीं। बाबा जी यही कहते-- "हम मौत से डरने वाले नहीं। अगर हम मरने से डरने वाले होते तो तुम्हारे साथ इतनी लड़ाइयां नहीं लड़ते।" बाबा जी को और अधिक दुखी करने के लिए उनके चार वर्ष के मासूम पुत्र बाबा अजै सिंघ को उनके सामने लाया गया। बाबा अजै सिंघ को उनकी गोद में बिठाकर कत्ल करने का हुक्म दिया गया। किसी भी व्यक्ति के लिए उसकी संतान सबसे अहम स्थान रखती है, परंतु बाबा जी अपना जीवन और परिवार सिक्ख धर्म को समर्पित कर चुके थे। जल्लाद ने खंजर लेकर बाबा जी की गोद में लेटे बच्चे को शहीद कर दिया। मुख पर नूर वाला छोटा-सा बच्चा, जिस पर मानों मौत भी मोहित हो गई थी, ने अपने श्वास त्याग दिये। जल्लाद ने उसके कोमल शरीर के छोटे-छोटे टुकड़े कर दिये। इतने-से भी उसका मन न भरा। उसने बाबा अजै सिंघ की पेट की अंतड़ियों को निकाल उनका हार बनाकर बाबा जी के गले में डाल दिया। उसका तड़पता हुआ दिल बाबा जी के मुंह में डाल दिया गया। यह सत्य है कि बाबा जी ने जंग के मैदान में जो बहादुरी दिखाई, उससे भी ज्यादा हिम्मत उन्होंने शहीदी के समय दिखाई। बाबा जी को अडोल बैठा देख बादशाह तिलमिला उठा। उसने बाबा जी को तड़पाकर शहीद करने का हुक्म दिया। पहले बाबा जी की दायीं आँख निकाली गई और फिर बायीं। उनके मुख से वाहिगुरु के नाम का स्वर न निकले, इसके लिए उनकी जिह्वा काट दी गई। जंबूरे से उनके शरीर से मांस नोचा गया। उनके हाथ, बाजू काट कर फेंक दिये गये। उनके पैरों को धड़ से अलग कर दिया गया। जब उनका शरीर जमीन पर गिर गया तो उनका शीश धड़ से अलग कर 'गुरु के बंदे' को शहीद कर दिया गया। बाबा जी के शरीर के सैकड़ों टुकड़े किये गये। बाबा बंदा सिंघ बहादुर की बाहदुरी, निडरता और धर्म के प्रति उनका प्रेम एवं समर्पण उन्हें अमर शहीद बना गया :

सूरा सो पहिचानीऐ जु लरै दीन के हेत ॥
पुरजा पुरजा कटि मरै कबहू न छाडै खेतु ॥
(पन्ना ११०५)

Final

गुरु-घर की अप्रतिम श्रद्धालु : बीबी कौलां

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ साहिल**

जब सच्चा गुरु मिल जाए और जीवन के आध्यात्मिक उद्देश्य की प्राप्ति हो जाये तो सांसारिक रिश्ते-नातों और लौकिक उपलब्धियों की कोई कीमत नहीं रह जाती। बीबी कौलां का जीवन इस विराट सत्य की जीती-जागती मिसाल है।

प्रारंभिक जीवन : लाहौर लंबे समय तक मुगल सत्ता का केंद्र रहा है। सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और सत्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध (१५५०-१६५०ई) में यह शहर मुगल बादशाह अकबर और उनके पुत्र जहांगीर के नियंत्रण में रहा। इन्हीं दिनों यहां एक काज़ी थे, नाम था-- रुस्तम खान। रुस्तम खान को कई स्थानों पर 'रुस्तम खान मुजंग' भी लिखा गया है। रुस्तम खान की एक बेटी थी, जिसका नाम 'कौलां' था।

'महान कोश' में भाई कान्ह सिंघ नाभा ने लिखा है कि "कौलां" का असली नाम 'कमला' था और इसे रुस्तम खान ने दासी के रूप में खरीदा था। परंतु इस तथ्य का कोई पुष्ट प्रमाण नहीं मिलता।

बीबी कौलां अपनी हमउम्र किशोरियों से बिलकुल अलग थीं। अल्हड़पन और शरारतें उन्हें छू भी न सकीं। इसकी जगह उनके व्यक्तित्व में गंभीरता और विवेक दृष्टि झलकती थी। वे खेलने-कूदने और शृंगार आदि में मस्त रहने के बजाय रूहानी ख़यालों में खोई रहतीं। काज़ी पिता ने शरीअत के मुताबित बेटी की शिक्षा का पूरा प्रबंध किया। बीबी कौलां को कुरान और हदीस का पूरा-पूरा ज्ञान प्रदान किया गया।

बीबी कौलां ने भी मध्यकालीन लड़की होने के बावजूद बड़े मन से आध्यात्मिक और धार्मिक शिक्षा ग्रहण की।

गुरु-घर से प्रेम : बीबी कौलां आध्यात्मिक प्रवृत्ति की थीं, इसलिए वे रूहानी स्थानों पर जियारत के लिए जाती रहती थीं। इसी शृंखला में उनका मेल पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी के परम प्रिय मित्र हज़रत सांईं मियां मीर के साथ हुआ। सांईं मियां मीर का पवित्र गुरबाणी के साथ अटूट लगाव था, इसी कारण बीबी कौलां का भी गुरबाणी के प्रती स्नेह पैदा हुआ। वे बड़े प्रेम से गुरबाणी-गायन सुनती और मन ही मन अभिभूत होती रहतीं। धीरे-धीरे उनके हृदय में गुरबाणी एवं गुरु साहिबान के प्रति गहन सम्मान और अपार श्रद्धा उत्पन्न हो गई। उन्होंने बड़ी मात्रा में गुरबाणी कंठ कर ली और प्राय: वे गुरबाणी का पाठ करती रहतीं।

पिता की नाराजगी : पिता रुस्तम खान को जब इस बारे में पता चला तो वह बहुत नाराज हुआ। पहले उसने बीबी कौलां को प्यार से समझाने-बुझाने का प्रयास किया, परंतु बीबी कौलां अपने विश्वास पर अडिग रहीं। धीरे-धीरे रुस्तम खान का क्रोध बढ़ता चला गया। बीबी कौलां को डराया-धमकाया गया कि वह काफ़िरों के धर्म के प्रति श्रद्धा व प्रेम न प्रदर्शित करे। इतने पर भी बीबी कौलां ने अपने गुरबाणी-प्रेम का त्याग करना स्वीकार नहीं किया।

अंतत: पिता काज़ी रुस्तम खान की नाराज़गी और क्रोध चरम सीमा पर जा पहुंचा। बीबी कौलां को यातनाएं दी गईं और उन्हें काफ़िर

**१/३३८, स्वप्नलोक, दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब-१४११०१, फोन : १९४१७२-७६२७१*

Final

बन जाने का भय दिखाया गया। बीबी कौलां का उत्तर था कि सच्चे प्रभु तक ले जाने वाले विभिन्न आध्यात्मिक मार्गों को लेकर इतनी संकीर्णता क्यों?

मौत का फतवा और मां द्वारा सहायता : जब रुस्तम खान की बीबी कौलां पर एक न चली तो वह अत्यंत क्रोधित हो उठा और उसने अन्य काज़ियों से बीबी कौलां को कत्ल करने का फतवा जारी करवा लिया।

ऐसे समय में बीबी कौलां की मां का हृदय पसीज गया। वह बेटी को कत्ल होते हुए कैसे देख सकती थी? उसने एक योजना बनाई और बीबी कौलां को चोरी-छुपे हज़रत साईं मीआं मीर के पास भिजवा दिया।

गुरु-घर में शरण : हज़रत सांईं मियां मीर बीबी कौलां के गुरु-घर के प्रति प्रेम से भली-भांति परिचित थे। उन्होंने अपने शिष्य शाह अब्दुल्ला को बुलाया और बीबी कौलां को उसके हमराह कर यह हुक्म दिया कि वह उसे सुरक्षित छठम पातशाह साहिब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की शरण में पहुंचा आये।

शाह अब्दुल्ला बीबी कौलां को लेकर गुरु जी के पास पहुंचा और सारा वृत्तांत कह सुनाया। साथ ही हज़रत सांईं मियां मीर की यह प्रार्थना भी अरज़ की कि बीबी कौलां आपकी शरण में आई है। अब इसकी रक्षा करना आपके ही हाथ है।

गुरु साहिब की छत्र-छाया में : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब बीबी कौलां के गुरबाणी-प्रेम से अत्यंत प्रभावित हुए। श्री अमृतसर साहिब में गुरुद्वारा गुरु के महल के निकट 'फूलों (फुल्लां) वाली ढाब' स्थित है। गुरु जी ने यहां ढाब के किनारे बने एक भवन में बीबी कौलां का निवास करवा दिया और यहीं पर निर्भय होकर नाम-सिमरन करते हुए जीवन बिताने की आज्ञा दे दी। बीबी कौलां ने अपना सारा जीवन यहीं रहते हुए नाम-सिमरन और गुरबाणी पठन-पाठन करते हुए बिताया।

कौलसर का निर्माण : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब बीबी कौलां के गुरबाणी-प्रेम और समर्पण-भाव से अत्यंत प्रसन्न हुए। गुरु जी ने 'फूलों वाली ढाब' के स्थान पर एक सरोवर खुदवाने का निर्णय लिया। आप जी ने बाबा बुड्ढा जी को इस नए सरोवर के निर्माण का कार्य सौंपा।

गुरु जी की आज्ञानुसार बाबा बुड्ढा जी ने अरदास की और सिक्ख सेवादारों के साथ मिलकर सरोवर की खुदाई आरंभ कर दी। इस सरोवर के निर्माण का आरंभ सन् १६२४ ई में हुआ। कार्य सम्पन्न होने में लगभग तीन वर्ष लगे। सन् १६२७ ई में सरोवर-निर्माण का कार्य संपूर्ण हुआ। अमृत सरोवर से इस सरोवर में जल की आपूर्ति का पुख्ता प्रबंध किया गया।

गुरु जी ने इस नए सरोवर का नाम बीबी कौलां के नाम पर 'कौलसर' रखा। आज इस सरोवर के किनारे एक सुंदर गुरुधाम 'गुरुद्वारा बीबी कौलां जी' सुशोभित है।

शरणागत की रक्षा : बीबी कौलां के छठम पातशाह की शरण में चले जाने से काजी रुस्तम खान बहुत क्रोधित हुआ। उसने बहुत भाग-दौड़ कर गुरु जी के विरुद्ध कार्रवाई करवाने की कोशिशें की, परंतु वह सफल नहीं हो सका।

लाहौर का तत्कालीन सूबेदार वज़ीर खां गुरु जी का श्रद्धालु था। उसने रुस्तम खान की एक न सुनी। इसी प्रकार गुरु-घर के परम श्रद्धालु हज़रत सांईं मियां मीर के आगे भी रुस्तम खान की एक न चली। आखिर वह थक हार कर बैठ गया।

छठम पातशाह ने हर परिस्थिति में शरणागत की रक्षा करने के गुरु-घर के सिद्धांत का पूर्ण पालन किया। सन् १६३१ ई में बीबी कौलां का देहांत हो गया।

Final

महाराजा रणजीत सिंघ : एक अद्वितीय शख्सियत

*-श्री प्रयाग नारायण त्रिपाठी**

दो सदियां पूर्व पंजाब की धरती पर जन्मे देश के महान सपूत महाराजा रणजीत सिंघ सुयोग्य शासक व प्रशासक, महान योद्धा तथा मानवता के गुणों से परिपूर्ण शख्सियत के रूप में सदा याद किए जाएंगे। उनके पौरुष की छाप भारतीय इतिहास में अंकित हो चुकी है।

१३ नवंबर, १७८० ई को गुज्जरांवाला में जन्मे महाराजा रणजीत सिंघ १० वर्ष की आयु में ही अपने पिता के साथ भिन्न-भिन्न सैनिक दौरों पर जाने लगे थे। १२ वर्ष की आयु में पिता का देहांत हो जाने पर सारी जिम्मेदारी उनके ऊपर आ गई, जिसे उन्होंने पूरी तरह से निभाया। १९वां वर्ष लगते ही उन्होंने लाहौर पर कब्जा कर १९वीं सदी के आरंभ में सारे भारत पर अंग्रेजों का कब्जा हो जाने के बाद स्वतंत्र पंजाब में अपने शक्तिशाली एवं स्वतंत्र राज्य की बुनियाद रखी।

महाराजा रणजीत सिंघ से पूर्व पंजाब के अनेक क्षेत्र सिक्खों की अलग-अलग मिसलों के अधीन थे, जिनमें आपसी मेल-मिलाप नहीं था। महाराजा रणजीत सिंघ १७९२ ई में अपने पिता की मिसल के मुखिया बने और अगले ६ वर्षों में उन्होंने सारी सिक्ख मिसलों को एकता की माला में पिरो दिया तथा अफगान शासक शाहजमान के हमले को असफल कर दिया। १८०१ ई में सारी मिसलों ने उनको अपना तथा पंजाब का महाराजा स्वीकार कर लिया। महाराजा रणजीत सिंघ ने इसके बाद पेशावर, मुलतान, कांगड़ा, कश्मीर सहित अनेक प्रदेश अपने राज्य में मिला लिए।

जिन सफलताओं के लिए महाराजा रणजीत सिंघ को विशेष रूप से याद किया जाएगा, उनमें मुख्य ये हैं कि अपने शासन काल में उन्होंने अपनी दूर तक फैली सलतनत की प्रजा को न्याय-प्रेमी, लोकतांत्रिक और योग्य शासक के रूप में संतोष व खुशहाली प्रदान की। राजनीतिक दृष्टिकोण से महाराजा रणजीत सिंघ ने सिक्ख धर्म का धारक होते हुए राज्य के क्षेत्र में सब धर्मों का समान रूप से सम्मान किया और उनका आदर किया। उनके दरबार तथा राज्य में सर्वोच्च पदवियां सबके लिए प्राप्त थीं। उनके सबसे अधिक विश्वास-पात्र मंत्री थे-- फकीर अजीजुद्दीन, जिन्होंने जीवन भर महाराजा की वफादारी से सेवा की। डोगरा राजा धिआन सिंघ अपनी प्रतिभा तथा स्वामी-भक्ति के नाते प्रधानमंत्री पद तक पहुंचे। मेरठ का एक ब्राह्मण जमांदार खुशहाल सिंह भी इसी तरह अपने गुणों के कारण ऊंचे ओहदों पर पहुंचा। कई यूरोपियों को भी महाराजा के दरबार तथा शासन में प्रमुख स्थान मिला। वेनतुरा, जो इटली का निवासी था, प्रधान सेनापति बना। इसी तरह जहां तक शासन के क्षेत्र का संबंध था, हिंदू, मुसलमान, ईसाई, सिक्ख सबके लिए महाराजा रणजीत सिंघ के शासन में समान अवसर प्राप्त थे। वास्तव में भारत में वह धर्म-निरपेक्ष राजनीतिक प्रबंध का प्रारंभिक, लेकिन बहुत ही सफल प्रयोग था।

जनता की आर्थिक दशा सुधारने के लिए

Final

महाराजा रणजीत सिंघ ने जो महत्वपूर्ण यत्न किये, उनके लिए देश सदा उनका देनदार रहेगा। पंजाब विशेष रूप से कृषि प्रधान राज्य है, इसलिए अपना शासन स्थापित करने के पश्चात् महाराजा रणजीत सिंघ ने किसानों की दशा सुधारने की तरफ सबसे ज्यादा ध्यान दिया। यह स्वाभाविक भी था, क्योंकि वे खुद साधारण किसान परिवार में से थे और किसानों की दशा से परिचित थे। उन्होंने कृषि करने वालों को ज़मीन की मलकियत के हक देने के सिद्धांत को लागू किया। इसके साथ ही मध्यस्थों की जगह लगान की वसूली सीधे किसानों से होने लगी। कुओं के मालिकाना हक भी पहली बार किसानों को प्राप्त हुए। आजकल चाहे ये सुधार साधारण लगें, मगर १८वीं सदी के अंत तक, जबकि सामंती राज्य का बोलबाला था, ये क्रांतिकारी सुधार ही कहे जाएंगे। इनसे ही पंजाब समय पाकर देश में अनाज-भंडार का महा क्षेत्र कहलाने लगा।

औद्योगिक व्यवसायों को उत्साह देने के लिए भी महाराजा रणजीत सिंघ ने बहुत काम किए। मुलतान के रेशम उद्योग, कश्मीर के पशमीना एवं शाल उद्योग, श्री अमृतसर साहिब के फुलकारी उद्योग तथा चंबा व कसूर के चप्पल उद्योग को महाराजा रणजीत सिंघ के शासन काल में विशेष उत्साह मिला। इससे जहां आम जनता को राहत मिली, वहीं राज्य को भी अपनी आर्थिक दशा सुधारने का अवसर प्राप्त हुआ।

किसी भी प्रशासन की अच्छाई की कसौटी यह मानी जाती है कि हाकिम किस हद तक न्यायप्रियता को अपनाता है। न्याय का शासन वास्तव में आज के प्रगतिशील लोकतंत्र की आधारशिला है। महाराजा रणजीत सिंघ ने न्यायपूर्वक शासन करने के जो उदाहरण पेश किए वे उनसे पहले के शासकों में विशेषत: अंग्रेज हकूमत के ज़माने में नहीं मिलते। महाराजा रणजीत सिंघ ने लाहौर कोतवाल को लिखित अधिकार दिया हुआ था कि यदि मैं खुद राज्य का प्रमुख दोषी पाया जाऊं तो मेरे विरुद्ध भी कार्यवाही करने से हिचकिचाना मत।

महाराजा रणजीत सिंघ अपने समय के परिवर्तनों के प्रति भी सजग थे। उन्होंने अनेक नई खोजों को अपनाया। अंग्रेजों की सलाह (जो महाराजा की शक्ति की शासन कुशलता के कारण उनके मित्र बन गए थे) पर श्री अमृतसर में एक छापाखाना खोला। उन्होंने अपनी सेना को आधुनिक शस्त्रों से सुसज्जित किया। उन्होंने उन पुराने हथियारों का भी त्याग नहीं किया, जो पंजाब के शूरवीरों के पराक्रम के अनुकूल थे। अपने इतालवी सेनापति वेनतुरा को उन्होंने प्रेरित कर पंजाब की भयानक गर्मी में पानी को ठंडा रखने का यंत्र बनवाया।

महाराजा रणजीत सिंघ अपनी प्रजा को नए-नए कामों के लिए उत्साहित करते रहते थे और उनको ईनाम भी देते थे। तेग चलाने के मुकाबले अक्सर हुआ करते थे। निशानेबाजी और तैराकी के मुकाबले भी होते थे। पौरुष को प्रकट करते बाल-खेल भी महाराजा रणजीत सिंघ करवाया करते थे। उनमें से होनहार बहादुर बच्चों का चयन किया जाता था।

इस प्रकार महाराजा रणजीत सिंघ ने अपने लगभग ४७ वर्ष के शासन-काल में भिन्न-भिन्न दिशाओं में शासन और आचरण के जो उदाहरण स्थापित किए, उनके कारण पंजाब में साहस, शूरवीरता एवं खुशहाली की उच्च-रीतियां शुरू हुईं। इन रीतियों के अनुसार

Final

चलते हुए आज केवल पंजाब ही नहीं, हमारे देश के अनेक राज्य नए भारत के निर्माण में अपना रचनात्मक योगदान दे रहे हैं। महाराजा रणजीत सिंघ के अनेक शासकीय तथा मानवतावादी गुणों के कारण ही उनके आलोचक इतिहासकार सर लैपल ग्रिफन को लिखना पड़ा था कि "मुगल साम्राज्य के विनाशकारी तत्वों में जिस तरह महाराजा रणजीत सिंघ ने अपने थोड़े समय में लाहौर के सिक्ख साम्राज्य का प्रशासन चलाया, उस तरह से भारत का कोई भी तत्कालीन शासन नहीं चला सका।"

स. खुशवंत सिंघ अपनी पुस्तक 'दी सिक्खस' में लिखता है कि "व्यक्ति के रूप में महाराजा रणजीत सिंघ में कई ऐसी विशेषताएं थीं, जिन्होंने उन्हें जनता में लोकप्रिय बना दिया था। वे किसान वर्ग से कभी दूर नहीं हुए। ज्यादा शिक्षित न होते हुए भी उन्होंने अनुभव की पाठशाला में से बहुत कुछ सीखा। उनके जीवन-अनुभव ने उनको अपने संगी-साथियों के साथ नम्रतापूर्वक तथा दयालु व्यवहार करने की शिक्षा दी।"

किसी भी धर्म को मानने वालों के प्रति उनका व्यवहार विनम्र तथा आस्था वाला होता था। सिक्खों का सम्मान वे सहधर्मियों तथा साथियों के रूप में करते थे। अन्य धर्म के लोगों के प्रति भी उनके मन में इज्जत-मान की भावना होती थी।

२७ जून, १८३९ ई को महाराजा रणजीत सिंघ का निधन हुआ।

Final

उपहार ऐसा जो जीवन भर याद रहे

यह बात हर एक आम व खास व्यक्ति के मन को कचोटती रहती है कि वो अपने मित्रों, सम्बंधियों को यदि उपहार दे तो क्या दे? किसी के जन्म-दिन आदि या किसी विशेष दिवस पर किसी को कुछ भेंट किया जाए तो ऐसा उपहार हो जिसे स्वीकार करने वाला जिंदगी भर याद रखे। इसके लिए अब ज्यादा सोचने और चिंता की जरूरत नहीं है। जीवन भर का उपहार है 'गुरमति ज्ञान'। उपहार भी ऐसा कि जब हर माह मित्र आदि के घर पर जाकर डाकिया 'गुरमति ज्ञान' की प्रति थमाएगा तो आपका मित्र हर माह आपका शुक्रिया करता नहीं थकेगा। आप अपने मित्र या किसी सम्बंधी को केवल १००/- रुपये में उपहारस्वरूप 'गुरमति ज्ञान' का आजीवन सदस्य बना दीजिए और हासिल कीजिए अपने मित्र की जीवन भर की खुशियां। यह सौदा बेहद सस्ता एवं लाभकारी रहेगा। आज ही मनीआर्डर या बैंकड्राफ्ट के जरिए चंदा भेजकर अपने मित्र या सम्बंधी को 'गुरमति ज्ञान' का आजीवन सदस्य बनाकर उसे इस बहुमूल्य 'उपहार' से निवाजें। *-संपादक।*

श्री हरिमंदर साहिब और जून, १९८४ ई

*-स. वरिआम सिंघ**

श्री हरिमंदर साहिब आरंभ से ही जिज्ञासुओं के आकर्षण का केंद्र रहा है। असंख्य इंसान यहां से अमृत-बूंद प्राप्त कर अमर हुए; अनेक जिज्ञासुओं ने अपने हृदय में गुप्त बस रहे 'नाम' को इस जगह से प्रकट किया। गुरु जी का निशाना ही यह था कि एक ऐसे धर्म-स्थान की रचना करनी है जहां के दर्शन कर प्राणी अपने आप की पहचान कर सके।

मानव का शरीर भी हरि का मंदिर है। हर प्राणी के अंदर हरि बसता है। इस शरीर रूपी मंदिर में ब्रह्म विचार का जवाहर प्रकट होता है। श्री गुरु अमरदास जी के वचन हैं :

हरि मंदरु एहु सरीरु है गिआनि रतनि परगटु होइ ॥
मनमुख मूलु न जाणनी माणसि हरि मंदरु न होइ ॥
(पन्ना १३४६)

परमात्मा को जानने-पहचानने के लिए ही गुरुदेव जी का मानवता पर यह परोपकार है कि उन्होंने इस धरती पर ऐसा 'हरिमंदर' प्रकट कर दिया जिसके दर्शन कर, अमृत-सरोवर में डुबकी लगा, इलाही बाणी का कीर्तन सुन और पंगत-संगत की हाथों से सेवा कर जिज्ञासु ने यहां पर परमात्मा के प्रत्यक्ष दर्शन करते हुए अपने अंदर भी परमात्मा के अस्तित्व को महसूस कर लेना है और फिर नाम, दान, स्नान की यह बख्शिश, जो श्री हरिमंदर साहिब में आकर प्राणी ने प्राप्त की होती है, उस पर अमल जारी रखते हुए परमात्मा के साथ सदैव जुड़े रहना है।

मानवता के भले के लिए गुरदेव जी ने रामदासपुर (श्री अमृतसर) में 'हरिमंदर' प्रकट कर दिया, जहां बिना किसी ऊंच-नीच, छुआ-छूत या भिन्न-भेद की रोक-टोक के हर जिज्ञासु ने जाकर परमात्मा के प्रत्यक्ष दर्शन करते हुए अपने हृदय में बसते परमात्मा को प्रकट कर विस्मय-बोधक हो आनंद लेना है। यहां का माहौल, निरंतर नाम का प्रवाह, अमृत सरोवर, लंगर-पंगत का प्रबंध, यह सब मानव को अपने परम स्रोत के साथ जुड़ने के लिए सहायक होते हैं। इसका निष्कर्ष क्या निकलता है? प्राप्ति क्या होती है अर्थात् 'हरिमंदर' के दर्शन करने से मानव के जीवन में क्या तबदीली आती है? तबदीली यह है कि मानव सर्वव्यापक परमात्मा के अस्तित्व में विश्वास करने लग जाता है। उसे निश्चय हो जाता है कि उसके अंदर भी परमात्मा का अंश विद्यमान है और वह अंश शाश्वत है अर्थात् मरता नहीं, अमर है। इस तरह मानव-मन पर छाया सबसे बड़ा मृत्यु का भय सदा के लिए खत्म हो जाता है और वह सच्चाई पर दृढ़ता के साथ पहरा देता है; झूठ के विरुद्ध डट जाने की उसमें हिम्मत आ जाती है।

वह न किसी पर जुल्म करता है, न किसी का जुल्म सहन करता है। वह गरीब-मज़लूम की रक्षा के लिए ढाल बन जाता है और दुष्ट वृत्ति वालों के साथ टक्कर लेने के लिए मैदान में भी आ जाता है। जिज्ञासु की

**पूर्व सचिव, धर्म प्रचार कमेटी (शि. गु. प्र. कमेटी). श्री अमृतसर-१४३००१, फोन: ९८१४८-९८३६५*

Final

शख्सियत में श्री हरिमंदर साहिब के दर्शन-स्नान से यह तबदीली आना प्राकृतिक है और यह तबदीली है भी रचनात्मक अर्थात् मानव को ऊंचा उठाने वाली। हकूमतों, सरकारों, समय के हाकिमों, उनके हमलावरों, सबको मानव-स्वभाव में आई यह तबदीली, मानव की शख्सियत में अच्छे गुणों का हुआ विस्तार कदाचित नहीं भाया।

इतिहास गवाह है कि ऐसा घटनाक्रम जगत ने एक से अधिक बार देखा है। मानवता को नया जीवन-दान देने वाले इस स्रोत को खत्म करने के घिनौने यत्न अत्याचारियों द्वारा इसके वजूद में आते ही शुरू कर दिए गए थे। सुलही खान, सुलबी खान और बीरबल जैसों का श्री हरिमंदर साहिब की तरफ हमलावर बन कर आने के मंसूबे बनाना और फिर हमला कर भी देना। यह अलग बात है कि वे यहां पहुंचने से पहले ही ख़त्म हो जाते रहे, परंतु ये ऐतिहासिक घटनाएं प्रकट करती हैं कि ये लोग अमृत के इस स्रोत को इसके वजूद में आने के समय से ही खत्म करने की कोशिश में थे। केवल इतना ही नहीं, हकूमत की तरफ से कुछ लोगों को शह देकर श्री हरिमंदर साहिब की तर्ज़ का दूसरा स्थान बना कर लोगों को गुमराह करने के यत्न भी हुए थे। प्रिथी चंद ने हेहरीं (गाँव) में इस बदनीयत से ही ऐसा किया था, मगर वह असफल हुआ। जीत हमेशा सत्य की ही होती है।

१८वीं सदी में तो हमलावरों और हाकिमों की निगाह विशेष रूप से इस स्थान पर ही रही। जब वापिस जाते नादिर शाह को सिंघों ने अपने करड़े हाथ दिखाए तो नादिर शाह के पैरों तले से जमीन खिसक गई। उसने सिंघों के इस बहादुरी और दलेराना कारनामे को देख ज़करिया खान से सिंघों के बारे में पूछा तो ज़करिया खान ने सिंघों के आचरण के बारे में विस्तापूर्वक बताया। नादिर शाह ने जकरिया खान को सचेत किया कि ये लोग एक दिन अवश्य राज-भाग के मालिक बनेंगे। ज़करिया खान पहले भी काफी सजग था। नादिर शाह की यह भविष्य-वाणी उसने पल्ले बांध ली और सिक्खों को खत्म करने की पक्की ठान ली। सिंघों पर सब तरह की पाबंदियां लगा दी गईं। पाबंदियों के बावजूद सिंघों को चढ़दी कला में देख कर ज़करिया खान बहुत घबरा गया। उसे समझ नहीं आ रहा था कि सिंघों के साथ कैसे निपटा जाए। इस पर कुछ मौलवियों, काजियों ने उसे विश्वास दिलाया कि "सिंघों की शक्ति का राज श्री हरिमंदर साहिब है और वहां के सरोवर का जल उनके लिए आबे-हयात (अमृत) की तरह है, जिसे पीकर और जिसमें स्नान कर ये मृत्यु को भी कुछ नहीं समझते। ज़करिया खान! अगर तू सिंघों को खत्म करना चाहता है तो पहले इनकी शक्ति के स्रोत को बंद कर।" मौलवियों के इस मशविरे पर यकीन कर ज़करिया खान ने काजी अब्दुल रजाक और मुहम्मद बख़्श को दो हज़ार फौज देकर श्री हरिमंदर साहिब के चारों तरफ चौकियां बनाने के लिए यह आदेश देकर भेजा था कि किसी भी सूरत में इस सरोवर में न किसी सिंघ को स्नान करने दिया जाए और न ही इन्हें यहां इकट्ठा होने दिया जाए।

'मैलकम' अपनी पुस्तक 'स्केच ऑफ दी सिक्खज़' में लिखता है:--

"इतनी पाबंदियों और श्री हरिमंदर साहिब के चारों तरफ इतने सख़्त घेरे के बावजूद भी सिक्ख सवार अपने तेज़-तर्रार घोड़ों पर सवार होकर श्री हरिमंदर साहिब के दर्शन के लिए

Final

और सरोवर में स्नान के लिए आते थे। इस कोशिश में वे कई बार शहीद भी हो जाते थे, कई बार पकड़े भी जाते थे। ऐसे मौकों पर अपनी जान बचाने की जगह वे शहादत को खुशी-खुशी प्रवान करते थे।"

खुशवक्त राय भी लिखता है कि "ज़करिया खान की इतनी सख़्ती और श्री अमृतसर के चारों ओर सख़्त पहरे के बावजूद सिंघ जब भी समय मिलता सरोवर में जल्दी-जल्दी स्नान कर जाते थे। इस भागदौड़ में जो भी अभागा किसी सिंघ को रोकने का यत्न करता था, वह अपनी जान गंवा बैठता था।"

इसके बाद भी इस पवित्र स्थान को ढहाने और अपवित्र करने के कई यत्न हुए, परन्तु वे सिंघों को इस स्थान से शक्ति प्राप्त करने से रोक न सके, बल्कि सिंघ हर हमले के दौरान पहले से अधिक ताकत से साथ उठे, दोगुने-चौगुने होकर विचरण करते। उन्होंने इस पावन स्थान का अपमान करने वाले हर पापी को सबक सिखाया। जून, १९८४ ई के मनहूस दिन, जब इस धरती के सब जीवों को आत्मिक शांति और अमृत जीवन प्रदान करने वाले पवित्र स्थान श्री दरबार साहिब को गोलियां लगीं, तो हर सिक्ख और हर धर्मी पुरुष का हृदय छलनी हो गया, आत्मा जख्मी हुई। इस साल का हर पल ऐसे बीता जैसे कटे-फटे शरीर को किसी नमक की खान में घसीटा जाता रहा हो।

शिरोमणि अकाली दल ने सिक्ख पंथ की चढ़दी कला और पंजाब की आर्थिक हालत को बेहतर बनाने के लिए जो धर्म-युद्ध मोर्चा लगाया था उसमें दो लाख से अधिक शांतमयी गिरफ्तारियां और दो सौ से अधिक शहादतें देकर दुनिया के इतिहास में ऐसी उदाहरण कायम की गई थी कि लोकतांत्रिक विधान के जीवन-मूल्य जानने वाले लोग दंग रह गए। मोर्चे का हर पड़ाव बेशक वह रेल रोको, सड़क रोको, काम रोको आदि था, इतना सफल हुआ कि मौके की सरकार को मुंह की खानी पड़ी। सरकार ने हर स्तर पर पंजाब का मसला हल करने की बजाय बदनीयती इस्तेमाल की। सरकारी प्रचार-प्रसार के साधनों और नेशनल प्रेस के द्वारा सिक्खों के विरुद्ध प्रचार किया गया। सिक्खों पर 'आतंकवादी' और 'अलगाववादी' होने के गलत इलजाम लगा कर देश के बहुसंख्यक लोगों के मन में सिक्खों के प्रति नफरत और ईर्ष्या के ऐसे बीज बो दिए गए कि सदियों से इकट्ठे रह रहे लोग एक दूसरे के खून के प्यासे बन बैठे।

कितने दुख की बात है कि जिस देश की रक्षा और आज़ादी के लिए बहादुर सिक्ख कौम ने सदियों तक कुर्बानियां दीं, घर-बार छोड़ पहले मुगलों और फिर अंग्रेजों के साथ टक्कर ली, जिनको अंग्रेज़ यहां से जाते समय अलग देश लेने की खुली पेशकश करते रहे, मगर उन्होंने ऐसी पेशकशों को ठुकरा कर हमेशा देश-भक्ति का सबूत पेश किया, उनके साथ जो सलूक किया जा रहा है वह बहुत दुखदायी और दुर्भाग्यपूर्ण है।

जून, १९८४ ई में श्री हरिमंदर साहिब पर हुए हमले की घटना दुनिया भर के अमनपसंद लोगों के रौंगटे खड़े करने वाली थी। इस हमले के दौरान जो कत्लोगारत की गई, धार्मिक स्थान तोपों, टैंकों द्वारा गिराए गए, सांस्कृतिक विरासत, धार्मिक ग्रंथ अग्नि-भेंट किए गए, लूटमार की गई, यह सिक्खों को अपने ही देश में बेगाना होने का एहसास करवा रही थी। ऐसा तो किसी शासक देश की फौज

Final

अपने अधीन किसी अन्य मुल्क की जनता के साथ भी नहीं करती। दुनिया के इतिहास में यह पहली घटना थी जब अपने ही देश की फौज अपने देशवासियों पर ऐसे हमलावर होकर आई थी, जैसे किसी दुश्मन देश पर जीत प्राप्त करनी हो। सबसे बड़ी बात यह कि सरकार ने अपनी इस नादिरशाही कारगुजारी को अपनी गलती मानने की बजाय इसे बहुत बड़ी जीत समझा। श्री दरबार साहिब पर महीनों तक फौजी कब्जा जमाए रखा गया और इस कब्ज़े को हटाने के लिए भी सिक्खों को मोर्चा लगाना पड़ा। फौजी हमले के बाद फौज, नीम फौजी दस्तों और राज्य की पुलिस ने शहरों तथा विशेष तौर पर गाँवों में जो दमनकारी चक्कर चलाया, उसने अंग्रेज़, अब्दाली, जसपत, लखपत, मीर मन्नू, ज़करिया खान आदि के जुल्मों को भी मात दे दी। रात के समय गाँवों को घेरा डाला जाता। सारे गाँव में दहशत फैलाने के लिए एक-दो नौजवान अमृतधारी सिक्खों को पकड़ा जाता। नज़दीक बनी किसी कत्लगाह (इंटेरोगेशन सेंटर) में ले जाया जाता। फिर बेहद जुल्म-अत्याचार कर, चरखड़ी पर चढ़ाने की तरह हड्डी-हड्डी, अंग-अंग तोड़ दिया जाता। अगर कोई फिर भी बच जाता तो उस पर सात-आठ केस बना जेल भेज दिया जाता। अगर कोई मर जाता तो किसी नहर के किनारे या चौंक में मुकाबला बना कर मरा एलान कर दिया जाता। इन जुल्मों की कहानियां सुन अनेक नौजवान घबरा कर घर से भाग गए, कहीं छिप गए। जेलों में बंद निर्दोष सिक्ख नौजवानों को अधिक से अधिक कैद और मौत आदि की सज़ा देने के लिए हर रोज़ नए से नए कानून बनाए जाते रहे, जैसे राष्ट्रीय सुरक्षा कानून, इसमें की गई शोध, गड़बड़ी वाला क्षेत्र, विशेष अदालतें बनाने का कानून और आतंकवाद विरोधी कानून। इन कानूनों के अनुसार पकड़े गए सिक्ख नौजवानों को आतंकवादी एलान कर उम्र-कैद या फांसी की सज़ा तक दी गई। दोषी कौन है और निर्दोष कौन, इसका फैसला विशेष अदालतों में होना था, जिनकी कार्यवाही तकरीबन एकतरफा और गुप्त हुआ करती थी।

१९८४ ई के वर्ष की घटनाओं में अत्याचार और जुल्म की कोई हद न रही। सिक्ख इतिहास मुगलों के अत्याचारों से भरा पड़ा है, लेकिन इसमें जून, १९८४ ई के इस घल्लूघारे के साथ जिस चैप्टर की वृद्धि हुई है, यह पहले के जुल्मों, अत्याचारों को भी मात देने वाली साबित हुई है। इसके साथ ही इस घल्लूघारे के दौरान जिन गुरसिक्ख परवानों ने अपने पवित्र गुरुधामों की रक्षा के लिए शहादत प्राप्त कर शौर्य के जो करतब दिखाए, वे सारी दुनिया को हैरान कर देने वाले हैं।

Final

सीहां उपलु जाणीऐ . . .

*-स. बलविंदर सिंघ जौड़ासिंघा**

भाई सीहां और भाई गज्जण (तथाकथित उप्पल जाति के) सतिगुरु पर भरोसा रखने वाले गुरसिक्ख थे। दोनों चचेरे भाई थे। इतिहास बताता है कि दोनों भाई सच्चे पातशाह श्री गुरु नानक साहिब के साथ दूसरी उदासी के समय साथ गए थे। दोनों भाई जब गुरु-दरबार में गुरु-दर्शन के लिए आए तो पातशाह के आगे हाथ जोड़ प्रार्थना की, "कृपालु पातशाह! कोई ऐसा उपदेश हमें भी बख़्शिश करो कि हमारा भी जन्म-मरण कट जाए और धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष चार पदार्थ प्राप्त हों।"

कर जोरे ठांढे भए अस कीनी अरदास।
चतुर पदारथ देहु प्रभु जनम मरन कटि फांस ॥५६॥
(गुर प्रताप सूरज ग्रंथ, जिल्द चौथी, पृष्ठ ११२९)

पातशाह जी ने दोनों को संबोधित करते हुए कहा, "हे भाई! वाहिगुरु का सिमरन ध्यान लगाकर करो, सभी पदार्थ मिल जाएंगे।"

सिमरहु वाहिगुरू लिव लाई।
देइ पदारथ सो तुम ताईं ॥५८॥
(गुर प्रताप सूरज ग्रंथ, जिल्द चौथी, पृष्ठ ११३०)

दोनों भाइयों ने कहा, "पातशाह! 'वाहिगुरु' के अर्थ क्या हैं? हम अल्प बुद्धि वालों को समझाएं।" पातशाह ने कृपा करते हुए कहा, "वाहि नाम आश्चर्य का है, जिसकी सत्ता के कारण सब पदार्थ जाने जाते हैं। वह सत्ता जानी नहीं जा सकती, केवल अनुभव द्वारा समझी जाती है। 'गु' (गोइ) से तात्पर्य अज्ञान रूपी अंधेरा है, जो मानव के जवीन में अंधकार पैदा करता है। 'रू' प्रकाश या रौशनी का संबोधन है, जो जड़ अनित्य देह को प्रकाश दे रहा है, ज्ञान प्रदान कर रहा है। उसका नाम 'वाहिगुरु' है। उस 'वाहिगुरु' के जपने से ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चार पदार्थ प्राप्त होते हैं।" पातशाह ने और फरमान किया कि "अगर सतसंगत में चल कर जाएं तो एक-एक कदम में सौ-सौ गज़ का फल प्राप्त होता है। जिस माया के लिए लोग बड़े-बड़े यत्न करते हैं, वही माया भक्त-जनों के चरणों की दासी बन कर रहती है। भक्त-जन जो भी दिल में कामना करते हैं वही कामना परमात्मा पूरी कर देता है। जब 'वाहिगुरु' नाम का अर्थ समझ आ जाता है तो ज्ञान प्राप्त होता है। फिर मुक्ति मिल जाती है। चारों पदार्थ वाहिगुरु के अधीन हैं।"

पातशाह द्वारा प्रदान शिक्षा के अनुसार दोनों अमृत वेले उठ कर स्नान कर बाणी पढ़ते, दिन के समय काम करते, हर सांस के साथ वाहिगुरु का नाम जपते, आए-गए गुरसिक्ख और जरूरतमंद की टहल-सेवा करते :

श्री गुर को उपदेश सुनि करन लगे सो कार।
पिछली निस इशनान करि पढहि शबद हित धारि ॥ ६९॥
अंतर स्वास जि 'वाहि' मिलावैं।
निकसहि वहिर त 'गुरू' अलावैं ॥ ७०॥
(गुर प्रताप सूरज ग्रंथ, जिल्द चौथी, पृष्ठ ११३१)

वैसाखी, दीवाली आदि हर खास दिवस पर कड़ाह-प्रसाद बांटते। समय बीतता गया। भाई गुरदास जी ने भाई सीहां और भाई गज्जण की महिमा गायन करते हुए लिखा है :

सीहां उपलु जाणीऐ गजणु उपलु सतिगुर भावै।
(वार ११:१४)

**सचिव, धर्म प्रचार कमेटी (शिरोमणि गु. प्र. कमेटी), श्री अमृतसर-१४३००६, फोन : ९८१४८९८२१२*

Final

ख़बरनामा

भाई गोबिंद सिंघ लौंगोवाल के निर्देश पर शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के शिष्टमंडल ने आसाम के स्थानीय सिक्खों तक की पहुंच

श्री अमृतसर : ८ अप्रैल-- शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के मुख्य सचिव डॉ. रूप सिंघ के नेतृत्व में शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के सदस्यों और अधिकारियों ने आसाम में १८२० ई से बसे स्थानीय सिक्खों के गांवों का दौरा किया और उनकी मुश्किलों को जाना।

जिक्रयोग्य है कि शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की तरफ से आसाम की राजधानी गुहाटी में सिक्ख प्रतिनिधि बोर्ड ईस्टर्न जोन धोबड़ी साहिब तथा अन्य गुरुद्वारा कमेटियों के सहयोग से करवाए गए गुरमति समागम में श्री गुरु नानक देव जी के ५५० वर्षीय प्रकाश पर्व को समर्पित गुरमति समागमों में हिस्सा लेने के लिए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी का शिष्टमंडल आसाम पहुंचा। इस दौरान शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान भाई गोबिंद सिंघ लौंगोवाल के निर्देश पर स्थानीय सिक्खों की समस्याएं सुनने और सिक्ख संस्थायों के साथ संपर्क बनाए रखने के लिए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के सदस्य साहिबान और अधिकारीगण गांव बरकोला सिंघ और छप्परमुख में पहुंचे।

मुख्य सचिव डॉ. रूप सिंघ ने आसाम में बसते सिक्खों के इन ऐतिहासिक गांवों का दौरा करने के बाद बताया कि शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी श्री गुरु नानक देव जी के ५५० वर्षीय प्रकाश पर्व को समर्पित शुरू किए गुरमति समागम अभियान के अंतर्गत हर राज्य में बसे सिक्खों तक अपनी पहुंच बना रही है। इसी के अंतर्गत ही आसाम के स्थानीय सिक्खों तक पहुंच की गई है। उन्होंने बताया कि आसाम में छप्परमुख एक ऐसा गांव है जहां महाराजा रणजीत सिंघ के समय से सिक्ख बसे हुए हैं। उन्होंने जानकारी दी कि यह नगर गुहाटी से १२० किलोमीटर दूर स्थित है और यहां १८२० ई में उस समय के राजा चंद्रकांत सिंह की मदद के लिए शेरे-पंजाब महाराजा रणजीत सिंघ ने लगभग पांच सौ सिक्ख सैनिक भेजे थे। इनमें से बहुत-से लड़ाई के दौरान शहीद हो गए और जो बचे व जख्मी हुए थे वे स्थायी रूप से यहां के निवासी बन गए। उन्होंने बताया कि इन सिक्खों ने अभी तक सिक्ख विरासत और सिक्खी स्वरूप को दृढ़ता के साथ संभाला हुआ है। खास बात यह है कि ये लोग आज भी 'अनंद कारज' (विवाह) से पहले लड़का-लड़की को गुरु की खुशियां हासिल करने के लिए पंथक परिवार का सदस्य बनाते हैं। उन्होंने यह भी बताया कि स्थानीय सिक्खों का खाना-पीना, पहनावा और भाषा आसामी है, परंतु ये लोग सिक्ख रिवायतों की पालना बाखूबी करते हैं।

इसी दौरान स्थानीय सिक्खों ने शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के नुमाइंदों के सामने

Final

अपनी स्थानीय जरूरतों का जिक्र किया, जिसकी पूर्ति के लिए डॉ. रूप सिंघ ने प्रधान साहिब की स्वीकृति मिलने पर उन जरूरतों को पूरा करने का उन्हें विश्वास दिलाया। डॉ. रूप सिंघ ने कहा कि जल्द ही शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की तरफ से यहां पंजाबी अध्यापक भेजने के लिए प्रबंध किया जायेगा। इसके साथ ही इन सिक्खों को सचखंड श्री हरिमंदर साहिब सहित अन्य ऐतिहासिक गुरुधामों के दर्शन करवाने के लिए भी प्रबंध किये जायेंगे, जिससे ये लोग बहुमूल्य सिक्ख इतिहास, विरासत के साथ जुड़े रहें। इस अवसर पर स्थानीय निवासियों के अलावा आसाम के नौजवान सिक्ख नेता भाई अजीत सिंघ, भाई सिमरन सिंघ, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के कार्यकारिणी सदस्य स. खुशविंदर सिंघ (भाटिया) के अलावा सदस्य स. सुखवरश सिंघ (पन्नू), स. गुरिंदरपाल सिंघ गोरा, सचिव स. बलविंदर सिंघ जौड़ासिंघा, स. जसविंदर सिंघ दीनपुर मैनेजर श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर, स. परमजीत सिंघ खालसा, भाई हरपिंदर सिंघ प्रचारक आदि उपस्थित थे।

केंद्रीय विद्यालयों में पंजाबी पढ़ाने पर रोक लगाने की भाई गोबिंद सिंघ लौंगोवाल ने की निंदा

Final

श्री अमृतसर : १३ अप्रैल : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान भाई गोबिंद सिंघ लौंगोवाल ने केंद्र सरकार द्वारा पंजाब में चलाए जा रहे केंद्रीय विद्यालयों में विद्यार्थियों को पंजाबी विषय की शारीरिक और स्वास्थ्य शिक्षा पढ़ाना बंद करने के फैसले की सख्त शब्दों में निंदा की है। इसके साथ ही केंद्रीय विद्यालयों में पंजाबी माध्यम की जगह हिंदी व अंग्रेजी पढ़ाने के नादिरशाही फरमान को भी भाई गोबिंद सिंघ लौंगोवाल ने पंजाब, पंजाबी एवं पंजाबियत के साथ नाइंसाफी करार दिया है। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी कार्यालय से जारी बयान में उन्होंने कहा कि केंद्रीय विद्यालय संगठन का यह तानाशाही फैसला राज्य के विद्यार्थियों को अपनी मातृ-भाषा से तोड़ने वाला है। उन्होंने कहा कि पंजाबी मातृ-भाषा के साथ किए जा रहे भेदभाव को कभी सहन नहीं किया जा सकता। भाई लौंगोवाल ने कहा कि पंजाब में पंजाबी को अनदेखा करने के इस फैसले के विरुद्ध शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की तरफ से संबंधित विभाग को पत्र लिखा जायेगा। उन्होंने कहा कि यदि केंद्रीय विद्यालय संगठन पंजाब में चल रहे विद्यालयों में कोई और विषय पढ़ाना चाहता है तो उसके बदले में पंजाबी पढ़ाना बंद नहीं करना चाहिए। भाई लौंगोवाल ने कहा कि शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की तरफ से पंजाबी मातृ-भाषा से संबंधित जनरल हाऊस में एक विशेष प्रस्ताव पारित कर केंद्र सरकार को सभी राज्यों में पंजाबी भाषा को बनता मान-सम्मान देने के लिए आदेश जारी करने हेतु अपील भी की जा चुकी है।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के सहयोग से गुरुद्वारा श्री बाउली मठ साहिब, जगन्नाथपुरी का विकास होगा

श्री अमृतसर : १९ अप्रैल : सचखंड श्री हरिमंदर साहिब में दर्शन करने पहुंचे जगन्नाथपुरी मंदिर के मुख्य प्रबंधक श्री प्रदीप्त महापात्रा आई ए एस. ने कहा कि जगन्नाथपुरी में स्थित श्री गुरु नानक देव जी से संबंधित पावन स्थान गुरुद्वारा श्री बाउली मठ साहिब के विकास के लिए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के सहयोग से जल्द ही काम शुरू किया जायेगा। उन्होंने कहा कि जगन्नाथपुरी में श्री गुरु नानक देव जी आए थे और उनकी याद में वहां स्थापित गुरुद्वारा साहिब की सेवा-संभाल के लिए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के परामर्श से ही कार्य किए जाएंगे। उनके साथ जगन्नाथपुरी मंदिर के सदस्य श्री बी. के. साहू, स. सतपाल सिंघ पाल हट्टस उड़ीसा आदि उपस्थित थे।

इस दौरान श्री महापात्रा ने श्री हरिमंदर साहिब के प्रबंध के बारे में भी जानकारी हासिल की। बातचीत के दौरान उन्होंने कहा कि सचखंड श्री हरिमंदर साहिब के दर्शन कर उन्हें बेहद खुशी हुई है। उन्होंने कहा कि यहां का प्रबंध बहुत बढ़िया है और उन्होंने इस बारे में शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अधिकारियों से जानकारी हासिल की है। उन्होंने यहां की सफाई व्यवस्था की खुल कर तारीफ की।

जिक्रयोग्य है कि शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान भाई गोबिंद सिंघ लौंगोवाल इसी साल जनवरी महीने में जब उड़ीसा गए थे तो उन्होंने गुरुद्वारा श्री बाउली मठ साहिब के विकास से संबंधित जगन्नाथपुरी मंदिर के प्रबंधकों और उड़ीसा सरकार के साथ भी बातचीत की थी।

भाई लौंगोवाल ने किया माता त्रिपता जी निवास का शिलान्यास

श्री अमृतसर : २२ अप्रैल : सचखंड श्री हरिमंदर साहिब में नत्मस्तक होने के लिए आने वाली संगत की रिहायश की सुविधा में और विस्तार करने के लिए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की तरफ से श्री दरबार साहिब के नजदीक पापड़ां वाला बाज़ार के साथ लगते अकाली बाग वाली मार्केट के स्थान पर विशाल सराय बनाने की शुरूआत की गई, जो कि श्री गुरु नानक देव जी के ५५० वर्षीय प्रकाश पर्व को समर्पित 'माता त्रिपता जी निवास' होगी। इसका शिलान्यास शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान भाई गोबिंद सिंघ लौंगोवाल ने किया। उन्होंने कहा कि वर्तमान समय में संगत की आमद में ज्यादा विस्तार होने के कारण रिहायश की किल्लत को दूर करने के लिए नयी सराय के निर्माण का फैसला किया गया है। भाई लौंगोवाल ने कहा कि इस स्थान पर क्षेत्रफल ज्यादा होने के कारण बड़ी संख्या में कमरे बनाए जाएंगे।

Final

प्रसिद्ध सिक्ख इतिहासकार प्रो. किरपाल सिंघ के देहांत पर शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने खेद प्रकट किया

श्री अमृतसर : ७ मई : प्रसिद्ध सिक्ख इतिहासकार प्रोफैसर किरपाल सिंघ चंडीगढ़ के देहांत पर शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की तरफ से खेद प्रकट किया गया है। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान भाई गोबिंद सिंघ लौंगोवाल ने प्रो. किरपाल सिंघ के देहांत पर गहरे दुख का इज़हार किया है। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के मुख्य सचिव डॉ. रूप सिंघ ने भी प्रो. किरपाल सिंघ के देहांत को सिक्ख शैक्षणिक क्षेत्र के लिए न पूरा होने वाला घाटा करार दिया है। डॉ. रूप सिंघ ने कहा कि प्रो. किरपाल सिंघ विश्व प्रसिद्ध सिक्ख इतिहासकार थे, जिन्होंने डॉ. गंडा सिंघ के बाद सिक्ख इतिहास के क्षेत्र में बहुत-से कार्य किये। उन्होंने कहा कि वे शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के सिक्ख इतिहास रिसर्च बोर्ड और धर्म प्रचार कमेटी में लंबा समय मैंबर रहे। प्रो. किरपाल सिंघ को सन् २०१४ ई में श्री अकाल तख्त साहिब की तरफ से 'प्रोफेसर ऑफ सिक्खिज़म' की उपाधि दी गई, जबकि इससे पहले १९९२ ई में भी उनको शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की तरफ से सम्मान मिला। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी को सेवाए देते उन्होंने 'सिक्ख ऐतिहासिक स्रोत संपादना प्राजेक्ट' के अंतर्गत नौवें पातशाह तक सिक्ख इतिहास की २१ पुस्तकें संपादित करवाई। इसके अतिरिक्त देश के विभाजन के दुखांत के बारे में मौलिक कार्य करने के साथ-साथ उन्होंने साखी साहित्य पर भी महत्वपूर्ण खोज-कार्य किये। डॉ. रूप सिंघ ने कहा कि प्रो. किरपाल सिंघ जैसे मेहनती इतिहासकार का चले जाना सिक्ख जगत के लिए न पूरी होने वाली कमी है, जिसका पूरा होना मुश्किल ही नहीं बल्कि असंभव लगता है।

इसी दौरान शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के स्टाफ की तरफ से प्रो. किरपाल सिंघ के देहांत पर आयोजित शोक सभा में मूल-मंत्र और गुरु मंत्र के जाप के उपरांत बिछड़ी रूह की शांति के लिए अरदास की गई। शोक सभा में शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के मुख्य सचिव डॉ. रूप सिंघ, सचिव स. मनजीत सिंघ बाठ, स. बलविंदर सिंघ जौड़ासिंघा, निजी सचिव स. सुखमिंदर सिंघ और अपर सचिव स. सुखदेव सिंघ भूराकोहना ने प्रो. किरपाल सिंघ के कार्यों को याद करते हुए उन्हें श्रद्धांजलि भेंट की। प्रो. किरपाल सिंघ के देहांत के कारण शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के दफ्तर भी आधा दिन के लिए बंद रहे। उनके अंतिम संस्कार पर शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की तरफ से सचिव स. अवतार सिंघ सैंपलां और स्थानीय गुरुद्वारा साहिबान के मैनेजर शामिल हुए।

Final